तरुणके स्वप्न

मूल लेखक—

राष्ट्रपति

श्री सुभाषचन्द्र वसु

हिन्दी रूपान्तरकार

श्री गिरीशचन्द्र जोशी

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

२०३, हरिसन रोड

कलकत्ता

प्रथम संस्करण] फरवरी, १९३८ [मूल्य १॥)

शाखाएं—
ज्ञानवापी, काशी।
गनपतरोड, लाहौर।
दरीबाकलां, दिल्ली।
बांकीपुर, पटना।

मुद्रक—
कृष्णगोपाल केडिया
वणिक प्रेस
१, सरकार लेन, कलकत्ता

निवेदन

बंगला सम्वत् १३३० से अबतक मेरे जो लेख और पत्र प्रकाशित हुए थे, उन्हींमें से कुछका संग्रह कर "तरुण-के स्वप्न" प्रकाशित हुआ। समय न होनेके कारण सब पत्रों और लेखोंका अभी प्रकाशन संभव नहीं हुआ। यह पुस्तक जनप्रिय होनेसे भविष्यमे अन्यान्य पत्र तथा रचना और व्याख्यान एक साथ प्रकाशित करनेकी वासना है।

	विनीत—
१० पौष, १३३५ कलकत्ता।	श्रीसुभाषचन्द्र वसु

दो बात

एक बात तो यह है कि राष्ट्रपतिके लेख और पत्रों-का यह रूपान्तर अत्यन्त शीघ्रता और यथा संभव सत-र्कतासे किया गया है, आशा है पाठकों, पाठिकाओंको पर्याप्त शिक्षा तथा ज्ञान प्राप्त होगा।

दूसरी बात यह है कि इसमें यदि कोई त्रुटि रह गयी हो तो उसकेलिये लेखक नही मैं जिम्मेदार समझा जाऊं, गोकि मेरा विश्वास है कि पाठक तथा पाठिकाएं इसका समुचित आदर कर, लेखककी अन्य रचनाएं हिन्दीमें रखनेकेलिये मुझे उत्साहित करेंगी। बस!

गिरीशचन्द्र जोशी

तरुणका स्वप्न

एक उद्देश्यकी सिद्धिकेलिये, एक सन्देशके प्रचारकेलिये हमने पृथ्वीपर जन्म ग्रहण किया है। सूर्य यदि संसारको आलोकसे जगमगानेकेलिये उदित होता है, गन्ध वितरणकेलिये यदि उपवनमे फूल खिलते हैं, अमृतमय जलदानकेलिये यदि नदी समुद्रकी ओर दौड़ी जाती है, तो हम भी यौवनका पूर्णानन्द और उल्लास लेकर एक सत्यकी प्रतिष्ठाकेलिये संसारमे आये है। हमे उस गूढ़ उद्देश्यका आविष्कार करना होगा जिससे हमारा व्यर्थ जीवन सार्थक बने, ध्यान, चिन्ता और

कर्ममय जीवनकी अभिज्ञता द्वारा हमें उसका आविष्कार करना ही होगा।

हम यौवनकी बाढ़में लीन होते जा रहे हैं, संसारको आनन्दका आस्वाद देनेकेलिये, क्योंकि हम आनन्द-स्वरूप हैं। आनन्दके मूर्त्तिमान प्रतीककी तरह हम संसारमें विचरण करेंगे। अपने आनन्दमें हम हंसेंगे, साथ ही दुनियाको भी दिवानी बना देंगे। हम जिस तरफ घूम पड़ेंगे, निरानन्दका अन्धकार लजाकर भाग जायगा। हमारे जीवनदायी स्पर्शके प्रभावसे रोग, शोक, ताप भाग खड़े होंगे।

इस दुःखपूर्ण, वेदना-जर्जर नरलोकको हम आनन्द-सागरसे ओतप्रोत कर देंगे।

हम आशा, उत्साह, त्याग, ओज लेकर आये हैं। हम सृष्टि करने आये है, क्योंकि सृष्टिमें ही आनन्द है। बुद्धि, तन-मन-प्राण देकर हम सृष्टि करेंगे। हमारे अन्दर जो कुछ सत्य है, सुन्दर है. शिव है, उसे अपने सृष्ट पदार्थमें पूर्णरूपसे झलका देंगे।। आत्मदानमें जो आनन्द है, उस आनन्दसे हम विभोर होंगे। उस आनन्दका आस्वाद पाकर पृथ्वी भी धन्य होगी।

लेकिन इससे ही हमारे दानका, कर्मका अन्त न होगा। क्योंकि :—

जोतो देवो प्रान बोहे जावे प्रान
फूरावे ना आर प्रान ;
एतो कोथा आछे एतो गान आछे
एतो प्रान आछे मोर ;
एतो सूख आछे एतो साध आछे
प्रान होए आछे भोर

अनन्त आशा, असीम उत्साह, अपरिमेय तेज और अदम्य साहस लेकर हम आये हैं, तभी तो हमारा जीवन-श्रोत कभी रुंध नहीं सकता। अविश्वास और निराशा-के पर्वत सामने अड़ जायं, सम्पूर्ण मानव जातिकी शक्ति प्रतिकूल होकर आक्रमण करे, तब भी हमारी आनन्दमयी गति चिरकाल तक अक्षुण्ण रहेगी।

हमारा एक विशेष धर्म है, हम उसी धर्मका अनु-सरण करते हैं। जो नवीन है, जो सरस है, जिसका स्वाद दुनियाने आजतक नही चखा, हम उसीके उपासक हैं। हम पुरातनमें नवीन का, जड़में चेतनका, प्रौढ़में यौवनका, बन्धनमें असीमका उद्भाव करते हैं। हम इतिहाससे प्राप्त पुरानी अभिज्ञताको हर समय, हर हालतमें माननेको

तैयार नहीं हैं। हम अनन्त पथके यात्री हैं, मगर अपरिचित पथसे ही हमें प्रेम है, अज्ञात भविष्य ही हमारे लिये प्रियतर है। हम चाहते है; "the right to make blunders", हम भूल करनेका अधिकार चाहते है और इसी लिये हमारे स्वभावके प्रति सबकी सहानुभूति नहीं है, बहुतोंकी नजरमे हम संसारत्यक्त और भाग्यहीन हैं।

इसीसे हमे आनन्द है; यहीं हम गर्वीले हैं। क्योंकि यौवन हमेशा हर जगह संसारसे अलग और लक्ष्मीसे विलग है। हम अतृप्त आकांक्षाकी उन्मादनासे दौड़ते हैं, समझदारोंके उपदेश सुननेकी हमें फुर्सत भी नहीं है। भूल करें, भ्रममें पड़ें, गिर पड़े, तो भी हम उत्साहसे वंचित न होंगे, पीछे कदम न रखेंगे। हमारी ताण्डव लीलाका अन्त नहीं है क्योंकि हमारी गति अविराम है, वह कभी नही थमती।

हम देश देशमें स्वतन्त्रताके इतिहासकी रचना करते रहते हैं। हम शान्तिका जल छिड़कने यहां नहीं आये हैं, विवाद छेड़ने, संग्रामका संवाद देने, प्रलयकी सूचना देने, हम आये हैं, आते हैं। जहां बन्धन है, जहां अहम्मन्यता है, कुसंस्कार और संकीर्णता है, वहीं हम खड्गहस्त उपस्थित हैं। हमारा एकमात्र काम है, मुक्तिपथको

सर्वदा कांटोंसे रहित रखना ताकि मुक्तिसेना बिना बाधा जाती आती रहे।

हमारे लिये मनुष्यजीवन एक अखण्ड सत्य है। फिलहाल हम जो स्वाधीनता चाहते हैं, उस स्वाधीनताके बिना जीवन धारण करना एक विडम्बना है। जिसकी प्राप्तिकेलिये हमने युग युगमें हंसते हंसते अपना खून दिया है, वह सर्वतोमुखी है। जीवनके हर एक क्षेत्रमें, हर तरफ मुक्तिवाणीका प्रचार करने हम आये हैं। चाहे समाजनीति हो, अर्थनीति हो, राष्ट्रनीति हो या धर्मनीति हो, जीवनके प्रत्येक भागमें हम सत्यके प्रकाशमें आनन्दका उच्छ्वास देखना चाहते हैं, हम उदारताके मौलिक सिद्धान्तोंकी स्थापना चाहते हैं।

अनादिकालसे हम मुक्तिका सन्देश सुना रहे हैं, स्वतन्त्रताका गान गा रहे हैं। बचपनसे ही मुक्तिकी आकांक्षा हमारी रग रगमें बहने लगती है। पैदा होते ही हम जो रो उठते हैं, हमारा वह रोना पार्थिव बन्धनोंके प्रति विद्रोह प्रदर्शित करनेके लिये है। बचपनमें रोना ही हमारा बल रहता है, किन्तु यौवनके द्वारपर पहुंचते ही हमें भुजाओं और बुद्धिकी सहायता मिलती है। इन भुजाओं और बुद्धिकी सहायतासे हमने क्या नहीं किया? फिर-

सिया, असीरिया, बेबिलोनिया, मिस्र, ग्रीस, रोम, टर्की, इंगलैण्ड, रूस, जर्मनी, चीन, जापान, हिन्दुस्तान—चाहे जिस देशका इतिहास पढ़कर देखो, देखोगे कि हर देशके इतिहासके प्रत्येक पृष्ठपर हमारी कीर्ति ज्वलन्त अक्षरोंमें लिखी हुई है। हमारी सहायतासे सम्राट् सिंहासनपर बैठे और हमारे संकेतसे सभय सिंहासन छोड़कर भाग खड़े हुए। जिस तरह हमने एक तरफ प्रेमके आंसुओंसे ताजमहल निर्माण किया है, उसी तरह दूसरी तरफ अपने हृदयके रक्तसे पृथ्वीको रंजित किया है। हमारी संयुक्त शक्ति लेकर समाज, राष्ट्र, साहित्य, कला, विज्ञान, युग-युगमें, देश देशमें उन्नत हुआ है। फिर हमने जब कराल मूर्ति धारण कर ताण्डवनृत्य आरंभ किया है, उसके एक-एक पद विक्षेपसे कितने समाज, कितने साम्राज्य, धूलमें मिल गये हैं।

इतने दिन बाद हमने अपनी शक्ति पहचानी है, अपना धर्म जाना है। अब कौन हमारा शासन कर सकता है? कौन हमारा शोषण कर सकता है? नव जागरणके युगमें सबसे बड़ी बात, सबसे बड़ी आशा, तरुणोंका आत्म-प्रतिष्ठा-लाभ है। इसीसे तो जीवनके हर क्षेत्रमें यौवन-का रक्तिम आभास दिखलायी पड़ेगा। यह तरुणोंका

आन्दोलन जितना सर्वतोमुखी है, उतना ही विश्वव्यापी है। आज पृथ्वीके सब देशोंमें—विशेषकर जहां बुढ़ापेकी ठण्डी छाया दिखलायी पड़ती है, वहां, तरुण समाज सर ऊँचा कर सदर्प खड़ा हुआ है। ये किस दिव्यालोकसे पृथ्वीको उद्‌भासित करेंगे, कौन कह सकता है?

हे युवा हृदयो! उठो! वह देखो ऊषाकी किरणें छिटक रही हैं।

२ रा ज्येष्ठ १३३० (बंगला)
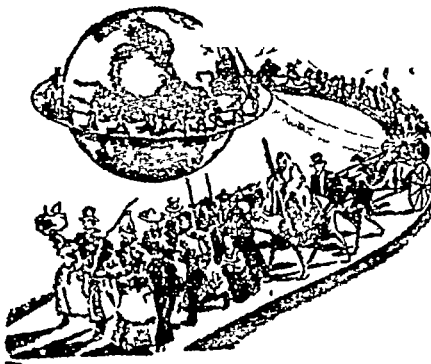
साथ साथ नवीन भारत गढ़ना होगा। साहित्य, विज्ञान, संगीत, शिल्प-कला, शौर्य-वीर्य, क्रीड़ा-कुशलता, दया-दाक्षिण्य इन सबकी सहायतासे नवीन भारत बनाना होगा। राष्ट्रीय जीवनकी सर्वतोमुखी उन्नति करनेकी शक्ति और राष्ट्रीय शिक्षाका समन्वय करनेकी प्रवृत्ति सिर्फ बंगालीमें ही है।

मेरा विश्वास है कि बंगालीका अपना एक वैशिष्ठ्य है। शिक्षा, दीक्षा, स्वभाव, चरित्र सबमें इस वैचित्र्यकी झलक रहती है। बंगालके प्राकृतिक दृश्यमें भी वैशिष्ठ्य लक्षित होता है। यहांकी मिट्टी, जल, आकाश, शस्यश्यामला धरती, ताल वृक्ष आवेष्टित पुष्करिणीमें क्या अपना वैशिष्ठ्य नहीं है? और प्रकृतिकी यह विशेषता क्या बंगालीके चरित्रको वैशिष्ठ्य नहीं देती? ऐसी नरम मिट्टीमें जन्म लेनेके कारण ही बंगालीके प्राण इतने सरस हैं। प्राकृतिक सौंदर्यके बीच लालित पालित होनेके कारण ही वह सुन्दरका उपासक है। सुजला, सुफला, शस्यश्यामला, जन्मभूमिका अन्न जल सेवन करके ही बंगाली काव्य और साहित्यमें ऐसा अपूर्व सर्जन कौशल दिखला सका है।

पिछले दो तीन वर्षोंमें जागरणकी जो बाढ़ आयी थी उसमें इस समय उतार दिखलाई पड़ता है, किन्तु चढ़ावमें

अब अधिक बिलम्ब नहीं है। बंगालके राष्ट्रीय स्रोतमें फिर भीषण चढ़ाव आनेवाला है। उस बाढ़के स्पर्शसे बंगालके प्राण फिर जग पड़ेंगे। बंगाली सर्वस्वको टेकपर रखकर फिर स्वाधीनताकेलिये पागल हो उठेंगे। देश फिर स्वाधीनताके लिये बद्धपरिकर होगा।

इस नव जागरणका स्वरूप क्या होगा यह कौन कह सकता है? इस नव यज्ञका पुरोहित कौन होगा, यह भी कौन बतला सकता है? जो भाग्यवान पुरुष इस यज्ञका पौरोहित्य ग्रहण करेंगे वे इस समय कहां रमे हुए हैं, यह भी कौन कह सकता है। इस आन्दोलनका नेतृत्व महात्मा-जी ग्रहण करेंगे या अन्य कोई मनीषी उनके आसन पर बैठेंगे भी यह हम नहीं जानते।

किन्तु इन सब प्रश्नोंके उत्तरके लिये बैठे रहनेसे नहीं होगा। उस नवजागरणके लिये अभीसे हम सबको प्रस्तुत होना होगा। ध्यान, धारणा, चिन्ता, कर्म, त्याग, योग इन सबमें रत रहते हुए हमें साधनाके लिये प्रस्तुत होना होगा।

बंग-जननी फिर तरुण संन्यासियोंका दल चाहती है। भाइयो! कौन कौन आत्म-बलिकेलिये प्रस्तुत है। आओ! मासे अभी तुम्हें सिर्फ दुःख, कष्ट, अनाहार,

सौ बातकी एक बात

मनुष्य जीवनमें बचपन, यौवन, प्रौढ़त्व और वार्द्धक्य है, उसी प्रकार राष्ट्रीय जीवनमें भी यही सिलसिला दिखलाई पड़ता है। मनुष्य मरता है और मृत्युसे निकल कर नवजीवन लाभ करता है। किन्तु व्यक्ति और राष्ट्रमें फर्क सिर्फ इतना है कि सब राष्ट्र मृत्युके बाद फिर जी नहीं उठते। जिस राष्ट्रके अस्तित्वकी कोई सार्थकता नहीं रह जाती, जिस राष्ट्रके प्राणोंमें कोई तत्व नहीं रह जाता, वह जाति दुनियासे लोप हो जाती है। अथवा कीड़ों पतिंगोंकी तरह किसी प्रकार जीती रहती है किन्तु

इतिहासमें नामोल्लेखके सिवा उसका निदर्शन कहीं नहीं रहता।

भारतकी कई बार मृत्यु हुई और उसने फिर फिर नवजीवन लाभ किया, इसका कारण यही है कि भारतके अस्तित्वकी सार्थकता थी और आज भी है। भारतका एक सन्देश है जो उसे विश्व परिषदको सुनाना है, भारतकी शिक्षा (culture) में ऐसा कुछ है जो विश्व-मानवके लिये अत्यन्त प्रयोजनीय है, जिसका ग्रहण किये बिना विश्व-परिषद्का उत्कर्ष नहीं हो सकता। सिर्फ यही नहीं ; विज्ञान, कला, साहित्य, व्यवसाय, वाणिज्य, सभी क्षेत्रोंमें हमारा राष्ट्र दुनियाको कुछ देगा, कुछ सिखायगा। इसीलिये भारतीय मनीषियोंने अन्धकारपूर्ण युगोंमें भी स्थिर भावसे भारतका ज्ञान दीप जलाये रखा था। हम उन्हींकी सन्तान हैं,हम क्या अपना राष्ट्रीय कर्तव्य पूरा किये बिना ही मर जायगे ?

मनुष्य देह पञ्च भूतोंमें मिल जानेपर भी आत्मा कभी नहीं मरती, इसी प्रकार राष्ट्रकी मृत्यु होनेपर भी उसकी शिक्षा-दीक्षा–सभ्यता रूपी आत्मा अमर है। राष्ट्रकी सर्जन शक्ति जब लुप्त हो जाय तब समझना होगा कि राष्ट्र मौतके घाट आ लगा है। आहार, निद्रा, सन्तानोत्पादन

ही उस समय उसका दैनिक कर्तव्य हो जाता है और पुराने जमानेसे चलती आयी परिपाटीकी लकीरको पीटना ही उसकी नीति हो जाती है। इस अवस्थामें पड़कर भी कोई-कोई राष्ट्र फिर जी उठता है—यदि उसके अस्तित्वकी सार्थकता रहती है। जिस समय अन्धकारमय युग आकर राष्ट्रको घेर लेता है, उस समय भी वह किसी न किसी तरह अपनी शिक्षा दीक्षा और सभ्यताको बचाये रखता है और अन्य राष्ट्रमें मिलकर अस्तित्व हीन नहीं हो जाता। इसके बाद भाग्य या भगवानके इंगित पर फिर नव जागरण होता है, अन्धकार धीरे-धीरे नष्ट हो जाता है, सुप्त जाति फिर आंखें मलकर उठकर खड़ी होती है, फिर उसकी सर्जन शक्ति जाग्रत हो जाती है। सहस्त्र दलकमलकी तरह राष्ट्रके प्राण फिर खिल जाते है तथा वह नवीन रूपसे, नवीन भावोंसे, नवीन नवीन दिशाओंमें आत्मप्रकाश लाभ करता है। इस प्रकारके अनेक जन्म और मृत्युके बीचमेसे भारतीय जाति होती चली आयी है। क्योंकि भारतीय जातिका एक mission है, भारतीय सभ्यताका एक उद्देश्य है, जो आज भी सफल नहीं हुआ है।

भारतके इस mission मे जिसका विश्वास है,

वही भारतीय जीवित है। भारतके पैंतिस करोड़ प्राणी जीवितकी तरह जीवित हैं यह सच नहीं है। जो युवक यह समझते हैं, अनुभव करते हैं वे ही जीवित हैं।

जन्मभूमिसे दूर जेलकी कोठरीमें महिने पर महिने काट रहा था, उस समय बार-बार मेरे मनमें यह प्रश्न उठता था;—"किसके लिये, किस उद्दीपनासे उद्दीप्त हो कारावासके बोझसे न दबकर हम और भी शक्तिमान हो रहे हैं?" इस प्रश्नका आत्मा जो उत्तर देती, वह यह था;—"भारतका एक mission है, एक गौरवमय भविष्य है, उस भावी भारतके उत्तराधिकारी हमी हैं। नवीन भारतके इतिहासकी रचना हमीने की है और करेंगे। इसी विश्वासके बलपर हम सब दुःख, यातना सहते हैं, वास्तविकताको आदर्शके आघातसे चूर-चूर कर डालते हैं। इसी अटल अचल विश्वासके कारण ही भारतीय युवकोंकी शक्ति मृत्युञ्जयी है।"

यही "श्रद्धा," ऐसा आत्म विश्वास जिसमें है, वही व्यक्ति सर्जक है, वही व्यक्ति देश-सेवाका प्रकृत अधिकारी है संसारमें जितने भी महान कार्य हैं वे सब मनुष्य हृदयके आत्मविश्वास और सर्जन शक्तिपर अवलम्बित हैं।

जिसका अपने राष्ट्रमें विश्वास नहीं है, अपनी आत्मा में विश्वास नहीं है, वह किस वस्तुकी सृष्टि कर सकता है ? भारतीयमें अनेक दोष हैं, किन्तु एक गुण है जिससे उसके सब दोष दब जाते हैं, जिसके कारण वह दुनियामें आदमी गिना जाता है। उसमें आत्म विश्वास है, भाव प्रवणता है, कल्पनाशक्ति है, इसीलिये वह वर्तमान जीवनकी सभी वास्तविक त्रुटियों, अक्षमताओं, असफलताओंको अग्राह्य कर महान् आदर्शकी कल्पना कर सकता है। उसी आदर्श के ध्यानमे मगन हो सकता है, जो असाध्य है उसके साधनकी चेष्टा कर सकता है। इसी कल्पना शक्ति और आत्मविश्वासके कारण भारतने कितनेही साधकोंको जन्म दिया है और देगा। इसी कारण दुख, कष्ट और अत्याचारसे उसका मेरुदण्ड कभी नहीं टूटेगा। जो जाति आदर्शवादी है वह अपने आदर्शके लिये यंत्रणा और क्लेशको सानन्द सह सकती है।

बहुतसे समझते हैं suffering में सिर्फ कष्ट ही है, पर यह सच नहीं है। Suffering मे जिस प्रकार कष्ट है उसी प्रकार अपार आनन्द भी है। किन्तु जो इस आनन्द-को महसूस नहीं कर सकता, उसके लिये कष्ट ही कष्ट है। वह दुःख और कष्टसे अभिभूत हो जाता है। किन्तु

जिसने दुःख और कष्टमें भी एक अनिर्वचनीय आनन्दका आस्वाद पाया है, उसके लिये suffering गौरवकी चीज है। वह कष्ट और यातनासे मुमूर्षु न होकर और भी शक्तिमान् और महान हो उठता है। अब सवाल होता है, 'यह आनन्दका स्रोत कहां है ?' मैं समझता हूं इस आनन्द की उत्पत्ति आदर्शके प्रति अनुरागसे होती है। जो व्यक्ति किसी महान् आदर्शको निस्वार्थ भावसे चाहनेके कारण दुःख और यन्त्रणा पाता है, उसके लिये वह दुःख और यन्त्रणा अर्थहीन—बेमतलब नहीं होती। उसके लिये तो दुःख आनन्दके रूपमें रूपान्तरित होता है। वही आनन्द अमृतकी तरह उसकी रग रगमें शक्तिका संचार करता है। वही जीवनका वास्तविक अर्थ समझ सकता है, आदर्शके चरणोंमें सर्वस्व समर्पण कर सकता है, वही जीवन-रसका आस्वाद पा सकता है।

पिछले अप्रैलमें इनसिन जेलमें एक रसियन उपन्यास पढ़ते पढ़ते ठीक इसी भावकी उपलब्धि हुई। उपन्यास लेखकने रसियन जातिको लक्षकर अपने नायक द्वारा कहा है;—There is still much suffering in store for the people, much of their blood will yet flow, squeezed out by the hands of greed

but for all that,all my suffering, all my blood is a small price for that which is already stirring in my breast, in my mind, in the marrow of my bones! I am already rich as a star is rich in golden rays. And I well bear all, will suffer all because there is within me a joy which no one, which nothing can ever stifle! In this joy there is a world of strength! (यानी; भाग्यमें अभी भी अनेक कष्ट है, लोभी और अत्याचारियोंके निष्पेषणसे अभी हमारा रक्त और भी बहेगा। तब भी जो सत्य मेरे चित्तमें, हृदयमें, अस्थि-मज्जामे स्पन्दित है, उसे पानेके लिये यदि मुझे दुःख कष्ट भोगना पड़े,मुझे अपना रक्त देना पड़े तो मैं समझूंगा कि बहुत कम दाममें महान् सम्पदा मिल गयी। सुनहरी किरणोंसे मण्डित तारेके समान अलभ्य सम्पदा मुझे मिली। इसीलिये मैं सम्पूर्ण कष्ट यन्त्रणा सहन करूंगा, सम्पूर्ण दुःख कष्टको अपने हृदयमें खींच लूंगा, क्योंकि मैंने अपने भीतर जो आनन्द पाया है उसे कोई भी पार्थिव पदार्थ दबाकर नहीं रख सकता, यही आनन्द अनन्त शक्तिका समुद्र है।)

नीलकण्ठ शिवको आदर्श मान जो व्यक्ति कह सकता है कि मेरे हृदयमें आनन्दका झरना खुला है, इसीलिये मैं संसारके सब दुःख कष्टोंको अपने हृदयमें खींचकर रख सकता हूं, जो व्यक्ति कह सकता है कि मैं सम्पूर्ण यातनाओंको भोगनेको तैयार हूं क्योंकि इनसे मुझे सत्यका आभास होता है, वही व्यक्ति साधनामें सिद्ध हुआ है।

हमें इसी साधनामें सिद्ध होना होगा। जो नवीन भारतकी सृष्टि करना चाहते हैं, उन्हें सिर्फ देते रहना पड़ेगा—जीवन भर देते रहना पड़ेगा, अपना सर्वस्व लुटाकर कंगाल हो जाना होगा, बिना किसी प्रतिदानकी इच्छा किये। अन्तमें जीवनदान देकर जीवनकी प्रतिष्ठा करना होगा। जो ऐसे साधक होंगे उनकी सम्पदा होगी उनका अपना आत्मविश्वास, आदर्शानुराग और आनन्द बोध।

कुछ दिन हुए छात्र-जीवनके एक बन्धुसे मुलाकात हुई, उसने मुझसे अनेक निराशा व्यंजक और अविश्वासपूर्ण प्रश्न किये। उसके प्रश्नका मर्म यही था कि हमारे देशका कुछ न होगा। कई प्रश्नका उत्तर पाकर फिर उसने पूछा, कौंसिलोंमें जाकर, सरकारी कार्यमें अड़ंगा लगाकर, मंत्रियोंको भगाकर क्या होगा? मैंने उत्तर

दिया, यह सब न किया जाय तो क्या होगा? फिर उसके अविश्वास और अश्रद्धाके भावको लक्ष कर मैंने कहा, "देखो! तुम्हारी उम्र मुझसे कम है, आदर्शकी प्रेरणासे तुमलोग असहयोग आन्दोलनमें आये हो। मेरा आदर्शवाद बड़ोंके साथ बढ़ता चला जा रहा है पर तुम्हारा आदर्श दिन दिन क्षीण हो रहा है।" तब उसने स्वीकार किया कि पिछले वर्षों से नाना प्रकारके आघातोंके कारण उसमे यह भावान्तर हुआ है।

यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि पिछले दो वर्षों से अविश्वास और अश्रद्धाका भाव फैला हुआ है। इस कारण हमारी कार्यकरी शक्ति लंगड़ी हो गयी है, किन्तु अब इस जंजालसे अलग होनेका समय आगया है। अपने भीतरके शत्रुसे बड़ा और शत्रु कौन होगा? इसलिये सबसे पहले इस गृहशत्रुको ही भगाना होगा। तभी हम बाहरके शत्रुपर विजय प्राप्त कर सकेंगे। हमे दुर्जय आत्मविश्वास प्राप्त करना होगा। हमे आदर्शमे विश्वास, अपनी शक्तिमे विश्वास, भारतके गौरवमय भविष्यमें विश्वास करना होगा। इसी विश्वासकी प्रेरणासे उद्बुद्ध होकर हमें विश्वविजयी बनना होगा।

बंगालकी वर्तमान अवस्था देखनेसे दो बाते आशा-

प्रद मालूम होती हैं। (१) व्यायाम चर्चा और भूपर्यटन-की स्पृहा (२) युवकोंकी जागृति। एक समय बंगाली-कापुरुष समझा जाता था, वह अपवाद अब नहीं रहा। जो बंगालीके परम शत्रु हैं वे भी अब उसे बदनाम नहीं कर सकते। यह बदनामी किसने की थी और कैसे मिटी यह सब जानते हैं। किन्तु शारीरिक दुर्बलता अभी भी है। इस कमीको दूर करना होगा। हर्ष है कि बंगाली इस कमीको दूर करनेके लिये बद्धपरिकर हुए हैं और प्रान्तभरमें समितियां खुल रही हैं। कमजोरीका यह लांछन यदि हमेशाके लिये मिटाना है तो बंगालीको राष्ट्रीय दृष्टिसे सबल और वीर्यवान् होना होगा। कुछ विश्वविजयी पहलवान पैदा करनेसे ही कुछ न होगा। क्योंकि इस तरहके पहलवानोंकी शक्ति और शौर्यसे राष्ट्रीय गौरवकी वृद्धि होनेपर भी साधारण बंगालीकी शक्ति नहीं बढ़ेगी। जाति बलवान है या नहीं यह देखने-के समय उसके दो चार पहलवानोंको देखनेसे काम नही चलता, यह भी देखना होता है कि सर्वसाधारणका क्या हाल है।

बंगालीमें आजकल भ्रमणका शौक बढ़ रहा है यह सबसे अधिक आनन्दकी बात है। बंगाली तैराकीमें,

साइकिलपर विश्वभ्रमण करनेमें उत्साह दिखलाने लगा है। अपरिचित देश देखने, अपरिचितोंसे मिलनेकी जो व्याकुलता है इसीसे जातिगठन और साम्राज्य सृष्टि होती है। जो जाति अपनी परिमित सीमाके बाहर नहीं जाना चाहती उसका पतन अवश्यम्भावी है। दूसरी तरफ जो जाति बाधा विघ्न पारकर, प्राणोंकी माया त्यागकर, देश विदेशोंका भ्रमण करती है उसकी दिन दिन शारीरिक, मानसिक उन्नति तो होती ही है साथ ही साथ उसका साम्राज्य भी बढ़ता जाता है। कवि डी० एल० रायने जिस समय गाया था—"आमार एई देशेते जोन्म, जेन एई देशेते मोरि", उस समय उन्होंने हमारे सामने भ्रान्त आदर्श उपस्थित किया था। अब यह कहनेका समय आया है कि;—

"आमि जाबोना जाबोना, जाबोना घोरे
बाहिर कोरेछे पागल मोरे।"

घरका कोना छोड़कर अब हमें विश्वमें विचरण करना होगा। अपने देशको भी प्रत्यक्ष रूपसे अच्छी तरह देखना होगा फिर देशकी सीमा छोड़कर विदेशोंमें भ्रमण करना होगा तथा अपरिचित देशका आविष्कार करना होगा। जो जाति इस प्रकारके कार्य कर सकती है उस-

का शारीरिक बल, साहस, चरित्र बल, ज्ञान और अभिज्ञता बढ़ती है साथ ही साथ व्यवसाय तथा साम्राज्य बढ़ता है। ब्रिटिश जाति जो इतनी उन्नत है और इतना बड़ा विशाल साम्राज्य गठित कर सकी है, भ्रमणेच्छा उसका एक प्रधान कारण है। साम्राज्य प्रतिष्ठाकी इच्छा न रखते हुए भी विदेश भ्रमणसे हमारा हृदय विशाल होगा, आत्म विश्वास बढ़ेगा, बुद्धिका विकाश होगा इसमे किसे सन्देह है ? भू पर्यटनका यदि पूरा फायदा उठाना हो तो अमेरिकन धनियोंकी तरह विश्व भ्रमण न कर कुछ कष्ट सहकर पैदल, घोड़े या साइकिलपर विश्व भ्रमण करना चाहिये।

एक अन्य आशाप्रद लक्षण यह है कि सब जिलोंके युवकोंमें चांचल्य पाया जाता है। यह चांचल्य ही जीवन शक्तिका परिचायक है। तरुणोंमें जीवन आ गया है, वे अब अपना कर्तव्य समझने लगे हैं, इसी कारण असंख्य स्थानोंपर युवक समितियोंके अधिवेशन होते दिखलाई पड़ते हैं। बीच-बीचमें सुना जाता है कि वे काम करनेके लिये तैयार हैं किन्तु अभी उन्हें ठीक रास्तेका पता नहीं चलता। नेता न पाने पर और पथ न पहचानने पर भी युवक जाग पड़े हैं, अपना कर्तव्य और

दायित्व समझनेकी चेष्टा कर रहे हैं, यह मामूली बात नहीं है। मेरा यही कहना है कि यदि तलाश करनेपर भी नेता न मिलेगा तो क्या तुम चुप बैठे रह सकोगे? तुम लोग ही नेता बनाकर काममे लग जाओ। नेता आकाशसे नहीं गिरता, काम करते करते ही नेता हो उठता है। अब "कःपंथा" कहकर बैठे रहनेसे काम नहीं चलेगा। अपनी विवेक-बुद्धिके प्रकाशमें तुम अपना रास्ता खुद ही खोज लो। तुम समस्याको जितना जटिल समझते हो उतनी नहीं है। हम लोगोंका आदर्श यही है कि हम एक सर्वाङ्ग सुन्दर जाति बनाना चाहते हैं जो जाति ज्ञान और कर्ममें, शिक्षा और धर्ममें संसारकी सर्वश्रेष्ट स्वाधीन जातिके बराबर खड़ी हो सके। इसीलिये राष्ट्रीय जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें जागरण लाना होगा। किसी भी तरफसे लापरवाही नहीं दिखलाई जा सकती। जिसकी जैसी शक्ति हो, जिसको जिस तरफ अभिरुचि हो उसे अपने लिये वैसा ही कार्य-क्षेत्र चुन लेना चाहिये। जिसकी जैसी जन्म-जात या भगवत् दत्त क्षमता है, उसे उसीको विकसित करना चाहिये और उसे ही देश माताके चरणोंपर अर्पण करना चाहिये।

पिछले बीस वर्षोंमें बंगालमें अनेक साधक, कवि,

साहित्यिक, वैज्ञानिक नेता हुए। उनमें अनेक अपना कर्तव्य पूरा कर देशवासियोंको रुला स्वर्ग सिधार गये। उनके रिक्त स्थान अभीतक खाली पड़े हैं, यह कुछ कम लज्जाकी बात नहीं है। बंगालीको यदि बचे रहना है तो उसे ऐसे मनुष्योंका सर्जन करना होगा जो इन रिक्त स्थानोंका अधिकांश पूरा कर सकें। जो जाति वस्तुतः जीवित है, उस जातिमें ऐसे महत्वपूर्ण स्थान इस प्रकार शून्य नहीं पड़े रहते। महापुरुषोंके स्वर्गवासके बाद अन्य मनीषि उन स्थानोंको भर देते हैं। जो जाति एकमन होकर जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंकी साधनामें लगी रहती है उस जातिमें किसी भी तरफ उपयुक्त मनुष्यका अभाव नहीं होता। बंगालकी साधना अभी पूर्ण और सर्वांग सुन्दर नहीं हुई, इसीलिये किसी महापुरुषके जानेके बाद उनके रिक्त स्थानकी पूर्ति नहीं होती। सर्वांग सम्पन्न जातिका आदर्श सामने रखकर जातीय साधनामें प्रवृत्त न होनेसे वह साधना कभी भी विजय युक्त और साफल्य मण्डित नहीं होती। राष्ट्रीय जीवनके अनेक क्षेत्र है, सभी क्षेत्रोंमें जातिको पूर्ण करना होगा। जब जाग्रतिकी बाढ़ आयगी, तब वह जीवनके सभी क्षेत्रोंपर अधिकार कर लेगी। तरुण बङ्गालको स्वावलम्बी होना होगा, बाहिरी शक्ति-

पर निर्भर न होकर अपना भरोसा करना होगा। नवीन जातिकी सृष्टिका उत्तरदायित्व आज युवकोंपर है। इतना बड़ा दायित्वपूर्ण कार्य सफल बनानेके लिये प्राणोंकी बाजी लगाकर साधनामें प्रवृत्त होना होगा। बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि चारों तरफ इस साधनाका विपुल आयोजन चल रहा है। इस विराट् यज्ञमें हमी निश्चेष्ट रहेंगे, यह हो ही नहीं सकता। इसीलिये कहता हूं, हे तरुण दल! आओ, हम भी यह बाणी उच्चरित करें।

"मंत्रम् वा साधयेयम् शरीरम् वा पातयेयम्।"

आश्विन १३३२ (बंगला)
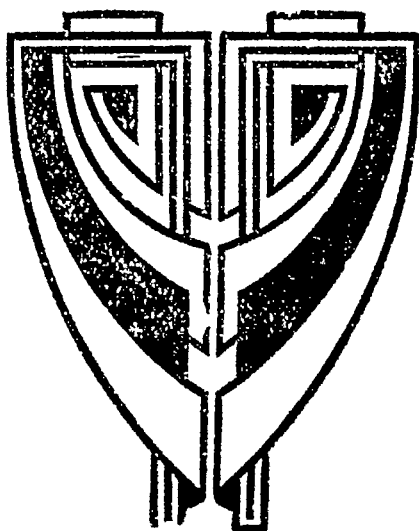
पत्रावली

मेरा देश

——**——

(माण्डलेकी जेलसे दक्षिण कलकत्ता सेवक समितिके सहकारी सम्पादक श्री० अनाथ बंधु दत्तको लिखा हुआ पत्र)

माण्डला जेल

दिसम्बर १९२६

सविनय निवेदन,

आपका ९ नवम्बरका पत्र यथा समय मिला। उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ, कुछ खयाल न कीजियेगा। अपनी इच्छाके अनुसार ही चलता तो पत्र नहीं लिखता, क्योंकि

राजबन्दीके साथ सम्बन्ध रखना वांछनीय नहीं समझा जाता। किन्तु आप पत्रोतरकी प्रतीक्षा करते होंगे और उत्तर पाकर सन्तुष्ट होंगे, यही समझ कर उत्तर देने बैठा हूं।

आपने सामुहिक रूपसे मुझे याद किया, मेरे स्वास्थ्यके लिये शुभ कामना की, मेरी रिहाईकी कामनाकी तथा मेरे प्रति अपने हृदयका प्रेम प्रदर्शित किया, इसके लिये मेरी आन्तरिक कृतज्ञता स्वीकार कीजिये। स्वदेश सेवक इससे बढ़कर और क्या पारितोषिक चाह सकता है? आपका पत्र पाकर और अखबारमें आपकी सभाका विवरण पढ़कर मैं आनन्दित हुआ, यह कहना न होगा। तब भी मैं समझता हूं इस तरहका आनन्द उपभोग करना, मनकी सर्वोच्चता प्रकट नहीं करता। क्या करूं? स्वदेश सेवी होनेकी स्पर्द्धा रखनेपर भी मैं मनुष्य हूं। अपनत्व और ममताका निदर्शन पाकर कौन सुखी नहीं होता? प्रेम और ममता पानेकी आकांक्षा पर विजय पा लेना या उससे आगे बढ़ जाना बहुत अच्छा है, तथा उच्च स्वदेश सेवीके लिये हर तरहके प्रतिफलकी आकांक्षा पर विजय प्राप्त कर लेना उचित है किन्तु यह अवस्था अभीतक मेरे लिये आदर्शही है। हृदयपर हाथ रखकर बोलते समय मुझे

भी Alexander Selkirk की भाषामें कहना होगा, बीच बीचमें मेरे भी मनमें होता है;—

"My friends do they now and then
Send a wish or a thought after me."

आज पूरे चौदह महीने मुझे जेलमें हुए। इनमें ग्यारह महिने बर्मामें काटे। समय समयपर मनमें होता है लम्बे चौदह महिने देखते-देखते चले गये, किन्तु कभी मनमें आता है कि न जाने कितने युगसे यहां हूं। जेल ही मानो घर द्वार है, यहांसे बाहरकी बात मानो स्वप्नकी बात है, मानो यहांका एकमात्र सत्य—वास्तविकता, लोहेकी गारद् और प्रस्तर प्राचीर है। सचमुच यह एक विचित्र दुनिया है। रह रहकर मनमें सोचता हूं, जिसने जेलखाना नहीं देखा उसने दुनियाका कुछ भी नहीं देखा। उसके सामने दुनियाकी बहुत-सी सचाई नहीं आयी। मैं अपने मनका विश्लेषण कर समझ पाता हूं कि ऐसे विचार ईर्ष्याके कारण नहीं उठते। वस्तुतः जेलमें आकर बहुत कुछ सीखा हूं। बहुत कुछ सत्य जो एक समय छाया के समान था, यहां वही स्पष्ट हो गया है। तथा अनेक नवीन गम्भीर अनुभूतियोंने मेरे जीवनको सबल और गम्भीर बनाया है। यदि भगवान किसी दिन सुयोग और

वाणी देंगे तो वे सब बातें देशवासियोंको सुनाऊंगा। जेलमें हूं, इससे दुखी नहीं हूं। देशमाताके लिये कष्ट सहना गौरवकी बात है। Suffering में आनन्द है इसे विश्वास करिये। अगर ऐसा न होता तो आदमी पागल हो जाता, ऐसा न होता तो यातनाओंके बीचमें मनुष्यका हृदय आनन्दसे भरकर हंसता कैसे ? जो वस्तु बाहरसे suffering मालूम पड़ती है, भीतरसे देखनेसे वही आनन्दमय मालूम होती है। निश्चय ही वर्षके ३६५ दिन और दिनके २४ घण्टोंमें हमेशा ही यह भाव मेरे हृदयमें नहीं रहता, क्योंकि अभी भी हाथोंपर बेड़ियोंके दाग हैं। किन्तु यह सच है कि उपरोक्त अनुभूति कम या ज्यादा जिसके हृदयमें नहीं है, वह suffering से जीवनको बल युक्त नहीं कर सकता और suffering के बीचमें प्रकृतिस्थ नहीं रह सकता।

मुझे दुख इस बातका है कि इन चौदह महीनोंका बहुत-सा समय योंही बिता दिया। अगर बङ्गालकी जेलमें होता तो साधनाके पथमें बहुत कुछ आगे बढ़ पाता। किन्तु यह तो होनेको न था। अब इस समय मेरी प्रार्थना यही है कि जिसके हाथमें पताका दो उसके हाथमें उसे धारण करनेकी शक्ति दो। जिस समय यहांसे छुटकारेकी

कल्पना करता हूं उस समय जितना आनन्द होता है उससे ज्यादा भय होता है कि तैयारी पूरी होते न होते कर्तव्यका आह्वान न आ जाय। तब यही चाहता हूं कि जब तक तैयार न हो जाऊं तबतक छुटकारेकी बात नहीं उठे। आज मैं बाहर भीतरसे तैयार नहीं हूं इसलिये कर्तव्यका आह्वान भी नहीं आया। जिस दिन तैयार हो जाऊंगा, उस दिन एक मुहूर्तके लिये भी यह मुझे अटकाकर न रख सकेगा।

यही भावोंका सिलसिला है, इसमें Objective truth है या नहीं, नहीं जानता। जेलमें रहते रहते subjective truth और objective truth एक हो गया हैं। भाव और स्मृतिके सहारे रहते रहते, भाव और स्मृति ही वास्तविकमें परिणत हो जाती हैं। मेरी अवस्था बहुत कुछ ऐसी ही हो गयी है। भाव ही मेरे लिये वास्तव सत्य है, क्योंकि एकत्व बोधमें ही शान्ति है।

आपने लिखा हैं, "देश और कालके व्यवधानने बंगालके लिये आपको और भी अधिक प्रिय कर दिया हैं।" और देश कालके व्यवधानने बंगालको मेरे सामने कितना सुन्दर, कितना वास्तविक बना दिया है, यह मैं कह नहीं सकता। देशबन्धुने कहा हैं, "बङ्गालके जल और मिट्टीमें

एक चिरंतन सत्य है" इस उक्तिकी सत्यता यदि यहां एक साल नहीं रहता तो इस प्रकार थोड़े ही समझ पाता। बङ्गालके शस्य श्यामल मनोहर क्षेत्र, मधुगन्ध-वह मुकलित आम्र कानन, आरति धूप धूम्राच्छादित मन्दिर, फलकवत् ग्राम्य कुटीर, मेरी आंखोंके सामने नाचता रहता है। ओह! ये सब दृश्य कल्पनामें भी कितने सुन्दर हैं।

सवेरे या दोपहरको जब मेघोंके टुकड़े, आंखोंके सामने आ आ कर चले जाते हैं, तब मनमें होता है कि विरहीयक्षकी तरह मैं भी अपने अन्तरतम प्रदेशका सन्देश वंग माताओंके चरणोंमें निवेदन करूं,—भेज दूं। आखिर वैष्णवोंकी भाषामें लिख भेजता हूं।

"तोमारेई लागिया कोलंकेर बोझा,
बोहिते आमार सुख।"

सायंकालके बढ़ते हुए अन्धकारके आक्रमणसे जब मार्तन्ड माण्डलेके दुर्गकी प्राचीरोंके पीछे छिप जाता है, अस्तोन्मुख सूर्यकी सुनहली किरणोंसे जब पश्चिम प्रदेश रञ्जित हो जाता है और उसी समय जब असंख्य रिक्तमेघ सूर्यकी लाल किरणोंसे रूप बदलकर लाल-लाल दिखलायी पड़ते हैं,उस समय बङ्गालके सुहावने सूर्यास्तकी

याद आती है। इस काल्पनिक दृश्यमें भी इतना सौन्दर्य यह पहले नहीं जानता था।

प्रातःकालकी विचित्र वर्णच्छटा जब पूर्वाकाशको रंजित करती है, तब निद्रालस नयनोंकी पलकोंपर आघात करके कोई कहता है, "अन्धे जागो।" उस समय और भी एक सूर्योदयका स्मरण होता है, जिस सूर्योदयमें कवि और साधकोंने मांका दर्शन पाया है।

जाने दो—शायद मैं pedantic हुआ जा रहा हूं। किन्तु यह pedantry नहीं, वाचालता है। भावोंका आदानप्रदान बन्द होनेपर, फिर एकाएक सुयोग मिलने-पर जो होता है,उसीका एक दृष्टान्त है। Engine समय-समयपर जैसे अपनी स्टीम बाहर छोड़कर आत्मरक्षा करता है, बस, ऐसी ही मेरी अवस्था है।

सेवक समितिका काम सुचारु रूपसे चल रहा है, सुनकर सुखी हुआ। Lansdowne ब्रांचके साथ किसी तरहका मनोमालिन्य न होना चाहिये। आशा है, वे लोग कामकाज ठीक चला रहे होंगे। दक्षिण कलकत्ता सेवाश्रम के Orphanage के लिये कुछ करें तो बड़ा अच्छा होगा। इसकी विशेष उन्नति नहीं हो रही है, किन्तु यह काम बहुत जरूरी है।

आपलोगोंको पहचाननेमें कष्ट या असुविधा नहीं है, आशा है आप सब सकुशल होंगे। मेरा प्रीतिसंभाषण और आलिंगन ग्रहण करें। इति

समाज-सेवा और गृह-शिल्प

[श्री० अनिल बन्धुको लिखे गये पत्रका अंश]

माण्डला जेल।

सविनय निवेदन,

आपका पत्र पाकर और सब समाचार जानकर आनन्दित हुआ। कार्यसमितिके अधिकांश सदस्य सेवाश्रमके कामोंमें दिलचस्पी नहीं लेते इससे आप निराश या चिंतित न हों। अधिकांश कार्यकारिणी समितियोंकी यही हालत है। अपनी सेवा और लगनसे ही दूसरोंमें सेवा और लगनकी भावना जगाना होगा। गांवमें दूसरेके दुखके प्रति समवेदना और आग्रहका भाव जाग्रत हुए

बिना सेवाकार्य संभव नहीं होता। इसके बिना यदि सम्भव भी हो तो सार्थक नहीं होता। आपकी आन्तरिक सेवा और लोकप्रियताके कारण दूसरोंके हृदयोंमें भी वैसे ही भाव जागरित होंगे, यही मेरा विश्वास और आकांक्षा है।

सेवाश्रम-भवनके साथ फुलवारी लगाने लायक जमीन है क्या? महीनेमें १४० तकका चन्दा आ जाता है सुन-कर सुखी हुआ। मकानका किराया क्या है? मकान कितने तल्लोंका है तथा कुल कितने कमरे हैं? कारपो-रेशन प्राइमरी स्कूलमें कितने छात्र हैं और किस जातिके छात्र पढ़ने आते हैं। सेवाश्रमके छात्रोंको किस तरहकी शिक्षा दी जाती है, इसका विवरण भेजियेगा। सेवाश्रम-में नौकर हैं क्या? यदि हैं तो कितने हैं? भोजन कौन बनाता है? बालकोंमें कितने तांत और Sewing machine का काम सीखते हैं। बुननेका काम और सीनेका (साधा-रण कोट, कुर्ता आदि) कितने दिनमें सिखलाया जा सकता है।

बालकोंका average intelligence कैसा है? सेवाश्रमके सम्बन्धमें यथासंभव विस्तृत विवरण भेजि-येगा। उसे पढ़कर कुछ परामर्श देनेकी चेष्टा करूंगा।

बालकोंके भोजनकी क्या व्यवस्था है ? बीमारीमें चिकित्साका क्या इन्तजाम है ? चिकित्सा और दवाके लिये दाम देने पड़ते हैं कि नहीं ? इति—

२

माण्डला जेल

*   *   *   *

सम्भव है आपने अबतक सुन लिया होगा कि हमारा अनशन व्रत बिलकुल निरर्थक या निष्फल नहीं हुआ। सरकार हमारे धार्मिक अधिकार माननेको बाध्य हुई। अबसे बंगालके बन्दी पूजा (दुर्गापूजा) के खर्चके लिये ३०) रुपये एलाउन्स allowance पायंगे, तीस रुपये बहुत कम हैं और इससे हमारा खर्चा पूरा न होगा, किन्तु जिस principle को सरकार अब तक मानना नहीं चाहती थी, उसे अब स्वीकार कर लिया है, यही हमारे लिये सबसे बड़ा लाभ है। रुपयेकी बात तो सब जगह, सब समय, बिलकुल मामूली बात है ? पूजा करने देनेकी मांगके सिवा सरकारने हमारी अन्य मांग स्वीकृत की है। वैष्णव भाषामें कहने जानेपर इसे इस तरह कहना होगा कि "एहि बाह्य"। यानी अनसनव्रतका सबसे बड़ा

लाभ अन्तरका विकाश और आनन्दलाभ है, मांग स्वीकार करा लेनेकी बात तो बाहिरी लौकिक बात है। Suffering के सिवा मनुष्य कभी भी अपने आन्तरिक आदर्शके साथ अभिन्नता महसूस नहीं कर सकता और कसौटीपर चढ़े बिना मनुष्य कभी स्थिर निश्चित भावसे नहीं कह सकता कि उसके भीतर कितनी अपार शक्ति है। इसी अभिन्नताके आधारपर मैं अब अपनेको और भी अच्छी तरह पहचान सका हूं तथा अपने पर मेरा विश्वास सौ गुना बढ़ गया है।

*   *   *   *

Social Service के द्वारा हमें गृहशिल्प-प्रतिष्ठाकी चेष्टा करना होगा। Commercial Museum, Bengal Home Industries Association आदि प्रतिष्ठान या दूकान देखनेसे हमारे मनमें नवीन भाव आ सकते हैं। बंगाल गवर्नमेंट द्वारा प्रकाशित शिल्प-विभागकी वात्सरिक रिपोर्ट (Administration Report of the Department of Home Industries) देखनेसे भी हमारा लाभ हो सकता है। सबसे आवश्यक बात यह है कि जहां गृहशिल्प हों वहां जाकर अपनी आंखोंसे देखने और जाननेसे ही लाभ हो सकता है।

कुटीर-शिल्पके लिये बहुत बड़ी रकम चाहिये, ऐसा मेरा विश्वास नहीं है। सबसे पहले जरूरी यह है कि सभाका एक सदस्य ऐसा होना चाहिये जो सिर्फ इसी विषयमें दिलचस्पी रखे, इस विषयकी सब बातें जाने और पुस्तकादि पढ़े तथा जहां कुटीर-शिल्प चलनेकी जरा भी सम्भावना हो वहां जाकर अपनी आंखोंसे सब कुछ देखे सुने। जब काम चलानेका निश्चय हो जाय तब जिसके जिम्मे काम चलानेका भार हो उसे पहलेसे उस कामकी शिक्षाके लिये उपयुक्त स्थानपर भेजकर शिक्षा दिलवाना चाहिये। पहलेसे ही Polytechnic Institute में भेजनेका प्रयोजन नहीं है। Electroplating का काम सिखानेकी जरूरत नहीं है। क्योंकि सिलाईका काम अपने यहां सिखाया ही जाता है और Electroplating सिखाने से कोई फायदा नहीं होगा। मुझे जहांतक याद है, मैं एक बार वहां गया हूं। Polytechnic के सब कामोंमें बेतका सामान बनाने और मिट्टीके खिलौने आदि बनानेका काम गृह-शिल्पके ढङ्गपर चलाया जा सकता है। इसमें भी बेतके कामके बारेमें मुझे सन्देह है कि स्त्रियोंसे यह काम करवाया जा सकेगा या नहीं? अब यदि मिट्टीके खिलौने आदिका काम चलानेका विचार हो तो कोई भी एक आदमी

वहां जाकर कुछ ही दिनोंमें सीखकर आ सकता है। इसमें खर्च भी कुछ न बढ़ेगा और जब यह काम शुरू किया जायगा, तब सिर्फ रंगोंमें कुछ खर्च करना पड़ेगा, इसके सिवा और खर्च बहुत कम होगा। सौ बातकी एक बात यह है कि एक आदमीको इसीके पीछे हाथ धोकर पड़ जाना होगा, He must become mad over it.

और एक बात बार बार मेरे मनमें आती है, सम्भव है पहले भी इस विषयमें लिख चुका हूं, बटन तैयार करने के सम्बन्धमें। ढाका जिलेमें अनेक गांवोंमें यह काम होता है। गरीब गृहस्थ अपने फुरसतके समय यही काम करते रहते हैं। एक आदमीको बहुत शीघ्र ही यह काम सिखाया जा सकता है। अथवा एक ऐसे आदमीको नियुक्त किया जा सकता है जो यह काम जानता हो और सिखा सकता हो।

अखबारमें विज्ञापन देनेसे ऐसा आदमी मिल सकता है। मेरा खयाल है कि पत्थरपर घिसकर बटन तैयार किये जा सकते हैं। छेद करने और गोल काटनेके लिये यंत्रकी जरूरत पड़ेगी। कुछ यंत्र और एक बोरा सीप और घोंघा से ही काम शुरु किया जा सकता है। जिनको सहायता-

की जरूरत है उन्हीसे यह काम शुरू करवाना चाहिये, किन्तु काम चल निकलनेपर गरीब गृहस्थ अपनी आय बढ़ानेके लिये यह काम खुद ही करने लगेंगे। समिति सस्ते भावमे raw materials दे और तैयार माल बेचने-का प्रबन्ध करे। यह काम शुरू करनेपर पहले इसमें काफी समय लगाना होगा। इति—

३

माण्डला जेल

आपने पहले जो कागजात भेजे थे, वे सब मिल गये थे। कल पुस्तकालयका सूचीपत्र आदि मिला। समिति-का कार्य दिनों दिन बढ़ रहा है, उससे मैं कितना आन-न्दित हूं, यह लिख नही सकता।

*　　　*　　　*

आप लोगोंने खर्चा बाद देकर इतने रुपये जमा कर लिये यह जानकर सुखी हुआ। चरखा, सूता आदिके विषयमे आपने जो कुछ लिखा है, उससे मैं सहमत हूं। तब भी अभीसे कोशिश बन्द नही करना चाहिये। आपने पहले एक पत्रमें लिखा था कि रूईकी खेतीकेलिये एक महाशय अस्सी बीघा जमीन देनेको तैयार हैं, वे महाशय

अभी भी तैयार हों तो रूईकी खेतीमें पहले पहले अधिक खर्च नहीं पड़ेगा। दो एक मालियोंके वेतन और बीजोंके दाम लायक रुपयोंका प्रबन्ध करनेसे साल भरमें ही हमें उसका फल मिल जायगा। कृषि विभाग (Agricultural Department) से यह जान लेना होगा कि किस जातिको रूईके बीज बोने चाहिये। जिन गृहशिल्पोंका श्रीगणेश कर चुके हैं,उनमें यदि नुकसान न हो,थोड़ा लाभ भी हो तो चलाते रहियेगा। फिर अधिक लाभका काम चल जानेपर यह काम बन्द किया जायगा। इस समय जो शरणागत हैं उनसे कुछ न कुछ काम अवश्य कराना चाहिये। भीख मांगना छोड़कर जब वे काम करने लगेंगे तब उन्हें लाभ जनक व्यवसायमें लगा देनेसे बहुत उत्तम फल मिलेगा। फिलहाल गृहशिल्पमें आर्थिक लाभ न भी हो तो काम करनेकी तरफ रुचि और dignity of labour की भावना जगाने और बढ़ानेसे समाजका बड़ा लाभ होगा। कुटीर शिल्पके सम्बन्धमें यदि आप श्री मदनमोहन वर्मनसे मिलें तो बड़ा अच्छा हो।

बड़ी, आचार, चटनी आदि तैयार हों तो ये चीजें भी चल सकती हैं। स्त्रियां, विशेषकर विधवाएं यह काम आसानीसे कर सकती हैं। किन्तु ये काम सिखानेवाला

आदमी मिल सकेगा क्या ? बाजारमें बेचनेकेलिये इन चीजोंका बहुत उत्तम होना जरूरी है। यदि अच्छी चीज तैयार होनेकी संभावना हो तो इसका experiment किया जा सकता है। Raw materials देकर आप तैयारी माल ले सकते हैं, बिक्रीकी जिम्मेदारी आपकी रहेगी। या वे खुद ही raw materials संग्रह कर माल तैयार कर आपके पास आकर बेच जा सकती हैं। काम शुरू करनेसे पहले दूकानदारसे बातचीत करना जरूरी है कि वे हमारा माल लेंगे या नहीं। Raw materials अच्छा होनेसे माल अच्छा बनेगा, पर इसमें चोरीकी भी सम्भावना है। जो ये काम करेंगी वे गरीब होंगी, फिर वे आम, नीबू, तेल, मिर्च आदि पानेपर उन्हें अपने उपयोगमें लानेके लिये नहीं ललचायंगी, यह कौन कह सकता है ? फिर यदि वे खुद raw materials लेंगी तो तेल वगैरह सस्ता ले सकती हैं और फलस्वरूप चीज बढ़िया तैयार न होगी। इस सम्बन्धमें आप दोनों तरफकी बातें सोच समझ कर ही कुछ निर्णय करें। इसके सिवा यह जानना भी जरूरी है कि बाजारमें इन सब चीजोंके खरीददार कैसे हैं ? मेरा खयाल है कि conscientious recipients नहीं मिलनेपर इस काममें सफलता नहीं मिल सकती।

गरीब भले गृहस्थों द्वारा यह काम चल सकता है। माल तैयार होकर आते ही उसका दाम या मजदूरी चुका देना पड़ेगा और मालको न बिकनेतक भण्डारमें रखना होगा।

समितिको एक और काममें हाथ लगाना चाहिये। कलकत्तेमें प्रेसीडेन्सी और अलीपुर दो जेल हैं। जेलके अस्पतालमें यदि कोई हिन्दू मर जाय और उसके सम्बन्धी कलकत्तेमें न हों तो उसकी दाह क्रिया उचित रूपसे नहीं होती,—डोम या मेहतरको पैसे देकर यह काम कराया जाता है। इस कामकेलिये मुसलमानोंका Burial Association है,जो मुसलमान कैदीके मरनेकी खबर पाते ही उचित व्यवस्था करता है। मृत हिन्दू कैदियोंकेलिये एक ऐसा organization चाहिये। सेवक समिति क्या इस कार्यका भार ले सकती है? यदि आपकी राय हो तो बसन्त बाबूकी मार्फत जेल सुपरिण्टेण्डेण्टको पत्र लिखा जा सकता है कि सेवक समिति इस कार्यका भार लेनेके लिये तैयार है। आप यदि इस सम्बन्धमें कोई व्यवस्था न कर सके तो मैं जेलसे आनेपर इस सम्बन्धमें विशेष प्रयत्न करूंगा। आदमी न होनेपर मैंने खुद कई बार यह काम किया है। ऐसे काममें स्वयंसेवक बननेकेलिये मैं हमेशा तैयार हूं।

गृह-शिल्प चलाना चाहते हों तो एक काम आवश्यक है। किसी युवकको कासिमबाजार polytechnic या इसी तरहकी दूसरी संस्थामे काम सीखनेकेलिये भेजना होगा। कासिमबाजार स्कूलमें मिट्टीके खिलौने और देव-देवियोंकी मूर्तियां बहुत अच्छी तैयार होती हैं। सहायता चाहनेवालोंको ऐसे काममें लगाया जा सके तो उनके द्वारा तैयार माल बङ्गाल भरमें बिक सकता है। यहांपर एक शिल्प और भी प्रचलित है, रङ्गीन कागजोंसे फूल, पेड़, पत्तियां, गुलदस्ते, चीनी लालटेन आदि बनाना। ये चीजें इतनी सुन्दर होती हैं कि देखनेपर एकाएक मनमें यह बात नहीं उठती कि ये चीजें असली नहीं, बल्कि कागजकी है। भले घरोंके छोटे बच्चे यह काम कर सकते हैं, यह बिलकुल आसान है।

ढाका जिलेमे कुटीर शिल्पके ढङ्गपर बटन तैयार होते हैं, वहां घर घरमें यह काम होता है, किसी आदमीको वहां यह सब देखनेकेलिये भेजा जा सकता है।

स्वास्थ्य विषयक व्याख्यान और मेजिक लालटेनके प्रदर्शनकी व्यवस्था भवानीपुरकी तरफ करना अच्छा होगा। जहां गरीब रहते है वहां व्याख्यानकी सख्त जरूरत है, यदि सम्भव हो तो मेजिक लालटेन आदि खरीदने

की व्यवस्था कीजिये। प्रदर्शनके लिये तस्वीरें किसीसे बनवा लेना शायद अच्छा होगा। इति—

४

(दक्षिण कलकत्ता सेवक समितिके अन्यतम कर्मी श्रीमान् हरिचरण बागचीको लिखे हुए पत्रका अंश)

माण्डला जेल

३—७—२५

तुम्हारे तीन पत्र यथासमय मिले। उत्तर देनेका अवसर नहीं मिला, इसके सिवा शरीर भी ठीक नहीं है। किसी तरहके काममें (लिखने पढ़नेमें भी) मन नहीं लगता। पहले हफ्तेमें दो पत्र लिख पाता था, अब सिर्फ एक लिख पाता हूं। फलस्वरूप, उत्तर देनेका अवसर न मिलनेके कारण दो तीन महिनेकी चिट्ठियां जमा हो जाती हैं।

Social Service विभागका प्रधान उद्देश्य होना चाहिये,—गरीबकी सहायता कर उसके द्वारा काम कराना। सिर्फ दान करना Organised Charity का उद्देश्य नहीं हो सकता। प्रतिदान न देकर दान ग्रहण करना आत्म सम्मानकेलिये हानिकर है, यही भाव गरीब सहायता चाहनेवालोंके मनमें जगाना चाहिये। तब भी

यदि कोई सहायता लेकर भी बदलेमें काम करना न चाहे, तो उसकी सहायता बन्द कर देना अच्छा है। पर इसके पहले दो एक बातोंपर विचार करना जरूरी है।

(१) जो सहायता लेता है उसे काम करनेकी फुर्सत होना चाहिये। यानी यदि कोई विधवा सहायता लेती हो और उसे गृहस्थीके कामोंसे अवकाश न मिलता हो तो उससे काम करनेकी जिद्द करना बेकार है। हमे देखना चाहिये कि सहायता पाकर कोई आलस्यमें समय तो नहीं बिता रहा है। इसलिये जांच पड़ताल करना आवश्यक है। समय और शक्ति रहनेपर भी जो काम नहीं करते उनकी सहायता बन्द कर देना चाहिये।

(२) जिनमें शारीरिक बल नहीं है तथा जिनके यहां कोई काम करनेवाला आदमी न हो, उनसे काम करानेके लिये जिद न करना चाहिये।

(३) काम करानेमें vartiey of choice होना चाहिये, क्योंकि सबसे सब काम नहीं हो सकते। पहले सहज काम करवाना चाहिये, फिर जरा मुश्किल काम सिखाना चाहिये ।

(४) जिनसे काम लेना हो उन्हें काम भी सिखाना चाहिये। अनेक काम ऐसे हैं जिन्हें आदमी जबतक

सीख नहीं लेता, करनेमें सकुचाता है। ऐसे काम आदमी अपने मनसे करनेके लिये तैयार नहीं होता, किन्तु काम सीख लेनेपर करने लगता है।

हम भिक्षुक जातिमें परिणत हो गये हैं, इसीलिये भिक्षककी मनोवृत्ति एक दिनमें नहीं बदल जायगी। तुम यदि आशा करोगे कि यह मनोवृत्ति एक दिनमें बदल जायगी तो निराश होना पड़ेगा। Social service में असीम धैर्यकी जरूरत है।

तुम्हारा काम होना चाहिये, raw materials, जैसे रद्दी कागज, घोंघा सीप आदिका प्रबन्ध कर देना। जो सहायता ग्रहण करते हैं वे raw materials से माल तैयार कर देंगे। तैयार माल बेचनेकी जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर है, उसके लिये तुमलोगोंको भिन्न भिन्न दूकानदारोंके साथ ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि वे चीजोंको बेच दें। इन सब चीजोंकी बिक्रीसे जो आय होगी, उसमें खर्चा बाद देकर जो रकम बच रहेगी उससे आंशिक रूपसे सहायता दानका काम चल जायेगा। Public Charity पर हमेशा निर्भर न रहकर स्थायी आयकी व्यवस्था करना होगा। हां, यह सब काम समय सापेक्ष और व्ययसाध्य है। पुस्तकालयके लिये किताब न खरीदकर

लेखकों और भले आदमियोंसे किताबें संग्रह करनेका प्रयत्न करो।

अनिलबाबूसे कहना, कि पुस्तकालयके लिये hap-hazardly पुस्तकें एकत्र न कर, एक method से संग्रह करें। हां, बिना दाम जो किताबें मिलें, वे रखो जा सकती हैं। तब भी एक प्रणाली होना चाहिये। पहले बंगला, अंग्रेजी और युरोपीय साहित्यके प्रसिद्ध लेखकोंकी किताबें संग्रह करना चाहिये। इसके बाद भारतका इतिहास तथा पृथ्वीके सब देशोंका इतिहास संग्रह करो। इसके बाद विज्ञान सम्बन्धी पुस्तक और महापुरुषोंकी जीवनी संग्रह करो। साथ ही साथ कृषि, राजनीति, वाणिज्य संबंधी पुस्तकें भी संग्रह करना चाहिये। एक साथ सब तरहकी पुस्तकें संग्रह की जा सकें तो बहुत अच्छा है। लगभग सभी विषयोंकी पुस्तकें रखना चाहिये ताकि चाहे जिस तरहकी रुचिका आदमी हो, मांगनेपर किताब पा सके रद्दी उपन्यास रखनेकी जरूरत नहीं है, मगर अच्छे उपन्यास अवश्य रखने चाहिये। यानी कम खर्चमें एक आदर्श पुस्तकालय होना चाहिये।

*　　　*　　　*　　　*

दूर देशसे सूत खरीदकर बहुत समयतक weaving

depot नहीं चलाया जा सकता। जिनकी सहायता करते हो उनके घरमें तथा समितिके सदस्योंके घरमें सूत उत्पादनकी चेष्टा करना चाहिये। भवानीपुर या उसके आसपाससे थोड़ा सूत भी न मिल सका तो तुम्हारा परिश्रम व्यर्थ है। और भी एक बात जान लेना चाहिये कि यदि स्थानीय लोग संस्थाकेलिये सूत तैयार करने लगें तो समझना चाहिये कि संस्थाके प्रति उनकी वास्तविक सहानुभूति है। स्थानीय सहानुभूतिके अभावमें कोई भी प्रतिष्ठान अधिक दिनतक नहीं चल सकता।

ऐसे आदमी भी मिल सकते हैं जो सूत कातेंगे पर बेचेंगे नहीं, किन्तु उनके काते हुए सूतसे धोती साड़ी बनाकर दे सको तो वे सूत कातकर देते रहेंगे। पहले अनेक सूत देकर धोती या साड़ी बनवाते थे। आजकल की हालत मैं नहीं जानता। तब भी मैं समझता हूं सूत लेकर धोती साड़ी तैयार करवाकर देनेकी व्यवस्था होना चाहिये। प्रत्येक सदस्यके घरमे सूत काता जाय इसका ध्यान रखना चाहिये। इति—

चरित्र गठन और मानसिक उन्नति

(दक्षिण कलकत्ता सेवक समितिके श्री हरिचरण बागचीको लिखे गये पत्रका अंश)

माण्डला जेल

तुमने जो लिखा ठीक है, वास्तविक कार्यकर्ताका बड़ा अभाव है। तब भी जैसा उपादान मिलता है उसे लेकर ही काम चलाना पडता है। जीवन न देनेसे जैसे जीवन नही पाया जाता, प्रेम किये बिना प्रतिदानमें जैसे प्रेम नहीं मिलता, वैसे ही स्वयं आदमी बने बिना आदमी-को "आदमी" नहीं बनाया जा सकता।

राजनीतिका स्रोत क्रमशः जिस प्रकार पंकिल होता जा रहा है उससे मनमें यही होता है कि कुछ समय तक राजनीतिसे देशका विशेष उपकार नहीं हो सकता। सत्य और त्याग—ये दो आदर्श राजनीतिसे जितने ही दूर होते जाते हैं राजनीतिकी कार्यकारिताका उतना ही ह्रास होता जाता है। राजनैतिक आन्दोलन नदीके स्रोतकी तरह कभी स्वच्छ, कभी पंकिल, सभी देशोंमें हो जाता है। बङ्गालमें राजनीतिकी अवस्था जैसी भी हो, तुम उस तरफ ध्यान न देकर सेवा कार्यमें अग्रसर होते जाओ।

* * *

तुम्हारे मनकी वर्तमान असन्तोष पूर्ण अवस्थाका कारण क्या है, यह तुम समझ सके हो या नहीं, मालूम नहीं, पर मैं समझ सका हूं। सिर्फ कामसे मनुष्यका आत्म-विकास सम्भव नहीं हो सकता। बाहिरी कामके साथ लिखने-पढ़ने और ध्यान धारणाकी भी जरूरत है। कामसे जैसे बाहरकी उच्छृंखलता नष्ट हो जाती है और मनुष्य संयत हो जाता है, उसी प्रकार लिखने-पढ़ने और ध्यान-धारणासे internal discipline, यानी आन्तरिक संयम प्रतिष्ठित होता है।

भीतरके संयमके बिना बाहरका संयम स्थायी नहीं होता। और एक बात है, व्यायामसे जैसे शरीरकी उन्नति होती है, उसी प्रकार साधनासे सद्वृत्तियां जाग-रित होती हैं और भीतरी शत्रुओंका नाश होता है। साधनाके उद्देश्य दो हैं—भीतरी शत्रु-भय, काम, स्वार्थ-परतापर विजय पाना (२) प्रेम, शक्ति, बुद्धि, त्याग आदि गुणोंका विकाश होना।

काम जयका प्रधान उपाय है स्त्री मात्रमें मातृरूपका दर्शन करना और स्त्री मूर्त्ति (दुर्गा, काली आदि) में भगवानका चिन्तन करना। स्त्रीमूर्तिमें गुरु या गोविन्द-का ध्यान करनेसे मनुष्य स्त्री मात्रमें भगवान देखनेका अभ्यस्त हो जाता है। इसीलिये महाशक्तिको मूर्त करते समय हमारे पूर्व पुरुषोंने स्त्री मूर्तिकी कल्पना की थी। व्यावहारिक जीवनमें स्त्री मात्रको मा के भावसे देखते रहनेसे मन क्रमशः पवित्र और शुद्ध हो जाता है।

भक्ति और प्रेमसे मनुष्य निस्वार्थ हो जाता है। मनु-ष्यके हृदयमें जब किसी आदर्शके प्रति प्रेम और भक्ति बढ़ती है, तब उसी अनुपातमें स्वार्थपरता कम हो जाती है। प्रेम करते करते भक्त क्रमशः सम्पूर्ण संकीर्णता छोड़कर विश्वमें लीन हो जाता है। मनुष्य जिस विषय

का अधिक ध्यान करता है, वैसा ही हो जाता है। जो अपनेको दुर्बल और पापी समझता है वह दुर्बल हो जाता है। जो हमेशा अपनेको पवित्र और शक्तिमान अनुभव करता है वह शक्तिमान और पवित्र हो जाता है। कहा भी है, "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।"

भय जय करनेका उपाय शक्ति-साधना है। दुर्गा, काली आदि मूर्ति शक्तिका रूप विशेष है। शक्तिके किसी भी रूपकी मनमें कल्पना करने और उससे शक्ति पानेकी प्रार्थना करने, उसके चरणोंमें मनकी सम्पूर्ण मलिनता और दुर्बलता बलिदान करनेसे मनुष्य शक्ति-लाभ कर सकता है। हमारे अन्दर अनन्त शक्ति निहित है। उसी शक्तिको जगाना होगा। पूजाका उद्देश्य है मनमें शक्तिको जगाना। हर एकको शक्तिका ध्यान कर पांचों इन्द्रियों तथा काम आदि रिपुओंका उसके चरणोंपर बलिदान करना चाहिये। पंच प्रदीपका अर्थ है पांचों इन्द्रियां। पांचों इन्द्रियोंकी सहायतासे माकी पूजा होती है। हमारे आंखें हैं इसीलिये हम रूपकी कल्पना करते हैं, नाक है इसलिये धूपादि सुगन्धित द्रव्य जलाते हैं आदि। बलिका अर्थ है, कामादि रिपुओंकी बलि करना। बकरा कामका ही रूप विशेष है।

साधनासे एक तरफ शत्रुओंका नाश दूसरी तरफ सद्वृत्तियोंका विकाश होता है। रिपुओंके नाशके साथ ही साथ हृदय दिव्य भावसे पूर्ण हो उठता है। तथा जैसे ही दिव्य भाव हृदयमें प्रवेश करते हैं, दुर्बलताएं भाग जाती हैं।

रोज (संभव हो तो) इसी प्रकार ध्यान करना। कुछ दिन अभ्यास करनेके बाद हृदयको शक्ति मिलेगी, शान्तिभी अनुभव करोगे। स्वामी विवेकानन्दकी कितावें पढ़ सकते हो,उनके पत्र और व्याख्यान सब कुछ मिलेंगे। "पत्रावलि" और व्याख्यान पढ़े बिना और कितावें पढ़ना ठीक नहीं। Philosophy of Relegion, jnan yoga" इस तरहकी कितावें पहले मत पढ़ना। इसके बाद साथ-साथ "श्री श्री रामकृष्ण कथामृत" पढ़ सकते हो। रवि बाबूकी अनेक कविताओंमें काफी inspiration मिलेगा। डी० एल राय की, मेवाड़ पतन, दुर्गादास आदि कितावें पढ़नेसे शक्ति मिलती है। वंकिमबाबू और रमेशदत्तके ऐतिहासिक उपन्यास खूब शिक्षाप्रद हैं। नवीनसेनका 'पलासीका युद्ध' पढ़ सकते हो। शिखेर बलिदान, शायद श्रीमती कुमुदनी वसुकी लिखी हुई अच्छी किताब है। Victor Hugo का Les Mesrables संभवतः पुस्तकालयमें होगी,

पढ़ना, अच्छी सीख मिलेगी। जल्दीमें अभी अधिक किताबोंकी तालिका नहीं दे सका। समय मिलनेपर सोचकर एक तालिका भेजूंगा। इति—

२

माण्डला जेल

स्वास्थ्योन्नतिकेलिये रोज व्यायाम करो तो बड़ा उपकार होगा। Mullar की 'My System' नामक किताब कहींसे लेकर उसके अनुसार व्यायाम करना अच्छा होगा। मैं मूलरके बताये व्यायाम अक्सर किया करता हूं, उनसे लाभ पाता हूं। मूलरके बताये व्यायाम-की विशेषताएँ हैं कि (१) कुछ खर्च नहीं होता और थोड़ी ही जगहमें व्यायाम हो जाता है (२) व्यायाममें अतिरिक्त परिश्रम नहीं होता इसलिये अधिक परिश्रमसे होनेवाली क्षति नहीं होती (२) सिर्फ अंगविशेषकी चालना नहीं होती बल्कि सभी मांसपेशियोंकी कसरत होती है। (४) परिपाक शक्ति बढ़ती है।

मेरा खयाल है, हमारे देशमें, विशेषकर छात्रोंमें मूलर-के व्यायामका विशेष प्रचार हो तो बहुत उपकार हो।

रोजमर्राका काम करके ही सन्तोष कर लेनेसे कुछ नहीं होगा। इन सब कामोंका जो उद्देश्य या आदर्श है,

यानी आत्म-विकास-साधन, उसे नहीं भूलना चाहिये। काम करते रहना ही जीवनका मूल उद्देश्य नहीं है, बल्कि कामके बीचमेंसे चरित्रका विकास और चरित्रका सर्वांङ्गीण विकाश आवश्यक है। यद्यपि प्रवृत्ति और व्यक्तित्व-के अनुसार व्यक्तिको एक तरफ विशेषत्व प्राप्त करना होगा, किन्तु इस विशेषत्वके मूलमे सर्वांगीण विकाश चाहिये। जिस व्यक्तिकी सर्वांगीण उन्नति नहीं होती उसके मनको शांति प्राप्त नहीं होती, वह भीतरसे सुखी नहीं होता, उसके मनमे एक शून्यता, एक अभाव आखिर-तक रह जाता है। इस सर्वांगीण विकाशकेलिये आव-श्यक है; (१) व्यायाम चर्चा (२) नियमित अध्ययन (३) दैनिक ध्यान और चिन्तन। कार्यकी अधिकतासे बीच-बीचमे इनकी तरफसे नजर फिर जाती है या ध्यान रहने-पर भी समय नहीं रहता, किन्तु कार्यभार कम होते ही इनकी तरफ ध्यान देना चाहिये। दैनिक काम करके ही निश्चिन्त हो जानेसे नहीं चलेगा, उसीमें से व्यायाम, पठनपाठन और ध्यान चिन्तनकेलिये भी समय निका-लना होगा। इन तीनों अत्यावश्यक कामोंकेलिये यदि आदमी प्रति दिन डेढ़ दो घण्टे भी निकाल सके तो बड़ा लाभ हो। मूलरका कहना है कि रोज उसके कहनेके

अनुसार पन्द्रह मिनट भी व्यायाममें खर्च करे तो यथेष्ट हैं और पन्द्रह मिनट ध्यान चिन्तामें लगावे तो कुल आधा घण्टा हुआ। एक घण्टा पढ़नेके लिये रखा जाय तो कुल डेढ़ घण्टा हुआ, इसमें रोजाना अखबार पढ़ना शामिल नहीं है। फिर जितना ज्यादा समय दे सको, उतना ही लाभ होगा। हर एकको अपनी सुविधाके अनुसार डेढ़ घण्टा निकाल लेना होगा। ध्यान धारणाके सम्बन्धमें पिछले पत्रमें कुछ लिखा है, इसीलिये इस पत्रमें नहीं लिख रहा हूं। मैं पुस्तकोंकी तालिका दे रहा हूं। ये किताबें सालभर पढ़नेके लिये काफी हैं।*

प्राथमिक शिक्षा और उच्च शिक्षाका एक बड़ा फर्क यही है कि प्राथमिक शिक्षामें facts का परिचय रहता है और उच्च शिक्षामें उसके साथ विश्लेषण और व्याख्या जुड़ जाती है। प्राथमिक शिक्षामें ऐन्द्रिक शक्तिपर विशेष निर्भर रहना पड़ता है। उच्च शिक्षामें ऐसी बातें सिखलायी जाती हैं जिसे छात्र देख नहीं पर समझ सकता है। और एक बात है सिखानेके समय इन्द्रियकी सहायता जितनी अधिक ली जायगी, सीखनेवालेको सीखनेमें उतनी ही आसानी होगी। जैसे—बांसुरी या इसी

* मूल पुस्तकमें कुछ बंगला पुस्तकोंका उल्लेख है।

तरहका बाजा सिखाना हो तो, छात्र यदि बांसुरीको देखे, छुए, बजाकर उसकी आवाज कानसे सुने तो बांसुरी बजाना बहुत शीघ्र जान जायगा। क्योंकि दृष्टि-शक्ति, श्रवण शक्ति, स्पर्श शक्तिको उसने एक साथ काममें लगाया। गोदका बच्चा कोई चीज देखते ही उसे छूना चाहता है, खाना चाहता है, उसका कारण यही है कि बालक सब इन्द्रियोंसे बाहरका ज्ञान प्राप्त करना चाहता है। इसलिये प्रकृतिके नियमके अनुसार यदि सब इन्द्रियों-से ज्ञान प्राप्त करनेका प्रयत्न किया जाय तो बहुत ही शीघ्र फल मिलेगा। गणित मुखस्थ न कराकर यदि हम छात्रको ईंट पत्थर या काठके टुकड़ोंसे उसे इस विषय-की शिक्षा दें तो वह आसानीसे समझ सकता है।

और एक बात है, मानसिक शिक्षाके साथ ही साथ शिल्प शिक्षाकी व्यवस्था भी होना चाहिये। खिलौने बनाना, मिट्टीसे मानचित्र बनाना, तसवीर बनाना, रंगों-का व्यवहार करना, गाना सिखाना आदिकी व्यवस्था भी होना चाहिये। इससे शिक्षा सर्वांग पूर्ण होगी यह नहीं बल्कि लिखने पढ़नेमें भी विशेष उन्नति होगी। पांच तरहकी चीजें सिखानेसे बालकोंकी बुद्धि बढ़ती है, लिखने पढ़नेमें मन लगता है और वे पढ़नेका नाम सुनते

ही भगाते नहीं हैं। पांच तरहकी चीज न सीखकर यदि "रट्टू" पढ़ाई ही पढ़ाई जाय तो बालक लिखने पढ़नेसे दूर भगाता है और उसकी बुद्धि विकसित नहीं होती। बालककी आंखें, नाक, कान, हाथ यदि उपयोग और जाननेकी चीज पायेंगे तो ये सब इन्द्रियां सजग हो जायंगी, जिसके फलस्वरूप उसकी बुद्धि और मन जागरित होगा और सब तरहका ज्ञान पानेके कारण लिखने पढ़नेमें उसका मन लगेगा। Manual traning के बिना शिक्षाकी जड़में मट्ठा पड़ जाता है। अपने हाथसे कोई चीज बनानेमें जो आनन्द मिलता है वैसा आनन्द पृथ्वीपर कम ही है। सर्जन करनेमें गम्भीर आनन्द निहित है। इसी joy of creation का, बच्चे अपने हाथसे जब कोई चीज़ तैयार करते हैं, तब अनुभव करते हैं। चाहे बगीचेमें पेड़ पौधे लगाकर या मिट्टीके खिलौने बनाकर यानी किसी भी नयी चीजको बनाकर बच्चे परम प्रसन्न होते हैं। बच्चे छोटी उम्रमें ही इस तरहका आनन्द प्राप्त कर सकें ऐसी व्यवस्था होना चाहिये। इसी प्रकार उनकी Originality या व्यक्तित्वका विकास होगा। वे लिखने पढ़नेसे न डरकर उसका आनन्द उठाना सीखेंगे। विलायतके अधिकांश स्कूलोंमें बच्चे बागवानी, व्यायाम, ड्रिल

खेल, गाना बजाना सीखते है, Route march करते है, जत्थे बनाकर सड़कोंपर घूमते हैं, कथाच्छलसे नाना देशोंके हाल जानते हैं। बच्चे ये न समझें कि वे लिखना पढ़ना सीख रहे हैं, बल्कि यह समझें कि वे कहानी सुन रहे हैं या खेल करते हैं। प्रथमावस्थामें Text Book की बिलकुल जरूरत नही है। पेड़, पत्ते, फूलोंके बारेमें जो कुछ बतलाया जाय वह पेड़, पौधे, फूल आदि सामने रख कर। आकाश, तारे आदिके बारेमें जब शिक्षा दी जाय तब मुक्त आकाशके नीचे ले जाकर। जिस चीजकी शिक्षा दो वह सब इन्द्रियोंके सामने उपस्थित हो। भूगोल सिखानेके समय ग्लोब, मानचित्र आदि रहना चाहिये। इतिहास सिखलानेके समय सुविधा अनुसार म्युजियम आदिमें ले जाना चाहिये। मामूली ढङ्गपर भी विद्यालय हो तो गानेकी शिक्षा, Painting, drawing, gardening आदि की शिक्षा देना चाहिये। असल बात यह है कि पाठ्य वस्तुका वास्तविक ज्ञान होना चाहिये, पाठ रट लेना उतना प्रयोजनीय नहीं है।

मैंने प्राथमिक शिक्षाके Principles या नीतिके सम्बन्धमें कुछ कहा। Text Book की बात ऐसे ही नहीं कह दी। Text Book का प्रयोजन कम है ही, जो पाठ्य

पुस्तकें रखना होगा, उनका Importance खूब कम है, अच्छे अध्यापकके बिना प्राथमिक शिक्षा सफल नहीं हो सकती। शिक्षाको सर्वप्रथम शिक्षाका Fundamental principles समझना होगा। उसके बाद नवीन शिक्षा प्रणाली चलायी जा सकती। उसे अपने प्रेम और सहानुभूतिसे विद्यार्थियोंकी पूरी देख भाल करना होगा। यदि शिक्षक छात्रकी अवस्थामें अपने आपको नहीं रखेगा तो वह किस तरह छात्रोंकी Difficulty और भूल भ्रांति समझ सकेगा। और Personality of teacher सबसे मुख्य बात है। शिक्षाके तीन प्रधान उपादान हैं। (१) शिक्षकका व्यक्तित्व (२) शिक्षाकी प्रणाली (३) शिक्षाका विषय और पाठ्य पुस्तक। शिक्षकमें व्यक्तित्व न हो तो किसी तरहकी शिक्षा संभव नहीं हो सकती। चरित्रवान व्यक्तित्व सम्पन्न शिक्षक मिलनेपर हमे शिक्षाप्रणाली निर्द्धारित करना होगा। योग्य शिक्षक मिले और शिक्षा प्रणाली निर्द्धारित हो जाय तो किसी भी विषयकी पुस्तक पढ़ायी जा सकती हैं।

आशा है तुम प्रसन्न होगे। इति

२

तुम्हारा पत्र यथा समय मिला, उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ, कुछ खयाल न करना। आशा करता हूं तुम मान-

सिक अशांति दूरकर प्रसन्नचित हो सब काम करते रहोगे। Milton ने कहा है। "The mind is its own place and can make a hell of heaven and a heaven of hell." निश्चय ही इस उक्तिको व्यवहारमें लाना हर समय संभव नहीं होता। किन्तु आदर्शको सामने रखे बिना जीवनमे आगे बढ़ना असम्भव है। वस्तुतः जीवनकी कोई भी अवस्था अशांतिहीन नहीं है, यह बात भूलनेसे काम नहीं चलेगा।

अपने छुटकारेकी बात अब मैं नही सोचता, तुम लोग भी मत सोचना भगवानकी कृपासे यहां मुझे मानसिक शांति मिली है, जरूरत होनेपर यहां सारा जीवन व्यतीत कर सकता हूं, ऐसी ताकत पा गया हूं, यही विश्वास होता है। मेरी शुभेच्छाका कोई प्रभाव नहीं है, किन्तु विश्वजननीका शुभाशीर्वाद वर्गकी तरह सर्वदा तुम्हारी रक्षा करें। और मैं क्या लिखूं? विश्वजननीमें विश्वास और भरोसा रखना। तुम उसकी कृपासे सम्पूर्ण विपत्ति और मोहसे उत्तीर्ण हो जाओगे। मनमें सुख शांति न रहने पर, बाहरका अभाव दूर होनेपर भी मनुष्य सुखी नहीं हो सकता। इसलिये संसारके सब काम करते रहने-पर भी विश्वजननीके प्रति हृदयको अर्पण करना चाहिये। इति।

(" आत्म शक्ति" सम्पादक श्रीगोपाल लालको लिखे हुए पत्रका अंश)

इनसिन जेल

५ अप्रैल, १९३७

परम प्रीति भाजनोषु,

आपका ५ वीं चैत्रका पत्र पाकर आनन्दित हुआ, आपने अनेक प्रश्न किये हैं क्या उत्तर दूं, मालूम नहीं। बहुत बातें लिखनेकी इच्छा होती है, पर लिखी जा सकती है क्या ?

शरीरके सम्बन्धमें कोई नयी बात नहीं कहना है, "यथा पूर्वम् तथा परम्" परिणाम क्या होगा मालूम नहीं; अब शरीरकी चिन्ता नहीं करता। पिछले महिनोंमे मेरे मनकी गति कुछ भिन्न धाराओंकी तरफ द्रुत वेगसे गयी है। मेरी यह धारणाबद्ध मूल होती जा रही है कि जीवन-को सोलहों आना देनेके लिये तैयार न होने पर मेरुदण्ड-को सीधा रखना मुश्किल है। जीवन प्रभातमें यही प्रार्थना हृदयमें रखकर अवतीर्ण हुआ था,—"तोमार पोताका जारे दाओं तारे बोहिबार दाओ शक्ति।" भविष्य-की बात तो नहीं कह सकता पर अभीतक वह शक्ति भग-बान देते आ रहे हैं। इसीलिये मैं बहुत सुखी हूं, बीच-

बीचमें मनमें सवाल होता है, मेरे समान सुखी दुनियांमें कितने हैं? इस समय वक्ताकार उन्नत प्राचीरसे निकलनेकी आशा जितनी दूर जा रही है, उसी अनुपातसे मेरा चित्त शान्त और उद्वेग शून्य हो रहा है। आत्मस्थ होना और अपने आत्म-विकाशके श्रोतमें जीवन नौका बहा देनेमें परम शान्ति है और अधिक समयतक बन्द रहनेमें भीतरी शान्ति ही एकमात्र सहारा है। अधिक कालतक कारावासमें रहनेकी सम्भावनामें मैंने अपूर्व शान्ति पायी है Emerson ने कहा है, We must live wholly from within इसका अक्षर अक्षर सत्य है और इस सत्यके प्रति मेरा विश्वास दिन-दिन दृढ़ होता जा रहा है।

मेरे समान जिनका जीवन है वे यदि बाहरकी घटनासे जीवनकी सफलता और विफलता निर्द्धारित करें तो; 'मृत्युरेव न संशयः' जिस कांटेसे हमारी (बन्दियोंकी) हालत वजन की जाती है, वह कांटा बाहरका नहीं भीतरका होना चाहिये। क्योंकि बाहरी हिसाबसे तो हमारा जीवन शून्य है। यहीं यदि यवनिका पात हो तो संसारपर तो हमारे जीवनकी स्थायी छाप नहीं भी रह सकती है। किन्तु जीवनमें यदि और काम न भी कर सकूं तो,

आदर्शको वास्तव द्वारा प्रस्फुटित न कर सकूं तो भी जीवन व्यर्थ न होगा। महान आदर्शको यदि प्राणोंमे रखे रहूं, आदर्शके साथ अपना जीवन मिला दूं तो मैं सन्तुष्ट हूं। मेरा जीवन दुनियाकी नजरोंमें व्यर्थ होनेपर भी, मेरी नजरोंमें (मालूम होता है भगवानकी दृष्टिमें भी) व्यर्थ न होगा। दुनियामें सभी चीज क्षणभंगुर हैं, सिर्फ एक चीज अविनाशी है, नष्ट नहीं होती, वह है भाव या आवेश। हमारा आदर्श, हमारी आशा, आकांक्षा, चिन्ता-धारा अविनश्वर है। आपको क्या दिवालोंसे घरकर कोई रख सकता है ?

पूर्ण रूपसे उत्सर्ग करनेके लिये दूसरी तरफ आदर्श-को पूर्ण रूपसे ग्रहण करना होगा। यानी आदर्शकी पूर्ण प्राप्तिके लिये अपना पूर्णोत्सर्ग चाहिये। त्याग और उप-लब्धि,—renunciation and realisation एक ही चीजके दो पहलू हैं। इस समय आदर्शको सम्पूर्णतः उत्सर्ग करनेके लिये मेरे प्राण व्याकुल हो उठे हैं।

जिन्होंने इतनी दुर्बलताके बीचमे मुझे शक्तिके उच्च शिखरपर आसीन किया है, वे क्या इतनी दया नहीं करेंगे ? उपनिषदमें कहा है "यमेवैष वनुते तेन लभ्यः" अब देखा जाय क्या होगा ?

बहुत दिन हुए systemetic study छोड़नेके लिये बाध्य हुआ हूं, राष्ट्रीयताकी भिति स्वरूप जो कुछ मूल समस्याएं हैं उनके समाधानके लिये लिखना-पढ़ना और गवेषणा शुरू की थी। आजकल वह काम बन्द है। फिर कब शुरू कर सकूंगा मालूम नहीं। बाहर निकलनेपर यह काम न कर सकूंगा इसलिये यहीं काम खतम कर लेना चाहता हूं। मेरे कारावासका काम शायद अभीतक समाप्त नहो हुआ इसलिये जानेमे विलम्ब हो रहा है।

भगवान आप सबको प्रसन्न रखें तथा उनका आशीर्वाद हमेशा आपको प्राप्त हो यही मेरी प्रार्थना है, इति—

जेल और कैदी

[श्री दिलीपकुमार रायको लिखे गये दो पत्र]

माण्डला जेल

२—५—२५

प्रिय दिलीप,

तुम्हारी २४-३-२५ की चिट्ठी पाकर आनन्दित हुआ। तुमने शंका की थी कि बीच-बीचमें जैसा होता रहता है, चिट्ठियोंको भी "double distiletion" के बीचमेंसे आना होगा किन्तु इस बार ऐसा नहीं हुआ इसलिये बहुत प्रसन्न हूं।

तुम्हारी चिट्ठी हृत्तन्त्रीका इस प्रकार कोमल भावसे

स्पर्श करती है, चिन्ता और अनुभूतिको अनुप्राणित करती है कि मेरे लिये उसका उत्तर देना सुकठिन है। इस चिट्ठी-को "censor" हाथोंसे गुजर कर जाना होगा यह भी एक असुविधा है। क्योंकि यह कोई नहीं चाहता कि उसके हृदयके गम्भीर भाव दिनके प्रकाशमें नग्न पड़े रहे। इसीलिये पत्थरकी दीवाल और लोहेके फाटकमें वन्द इस समय जो कुछ सोचता हूं, अनुभव करता हूं उसका अनेकांश उपयुक्त समय न आनेतक अकथित ही रखना पड़ेगा।

हममेंसे अनेक विना कारण और अज्ञात कारण जेलोंमे बन्द है, यह भावना तुम्हारी मार्जित रुचिको आघात करती है यह सम्पूर्ण स्वाभाविक है। किन्तु जब सब घटनाएं मनमें ही, भीतर ही भीतर हो रही हैं, तब इसे अध्यात्मिक दृष्टिसे भी देखा जा सकता है। मैं यह वात नहीं कह सकता कि जेलमे रहना ही मैं पसन्द करता हूं, क्योंकि यह कहना विलकुल ढोंग होगा। वलिक मैं यह तव कह सकता हूं कि कोई भी सभ्य शिक्षित आदमी जेलोंमें रहना पसन्द नहीं कर सकता। जेलकी आवहवा मनुष्यको विकृत और अमानुष करनेके लिये हैं, और मेरा विश्वास है यह वात हर एक जेलके लिये कही जा सकती है।

मेरा विचार है कि जेलमें रहनेवाले अधिकांश अप-राधियोंकी जेलमें नैतिक उन्नति नहीं होती बल्कि वे और भी हीन हो जाते हैं। यह मुझे मानना होगा कि इतने दिन तक जेलमें रहनेके कारण जेलोंमें आमूल सुधार होना चाहिये, यह मैं अनुभव करने लगा हूं और भविष्यमें जेलोंका सुधार भी मेरे कार्यक्रमका एक अंग होगा। भारतीय जेल-शासन-प्रणाली एक खराब प्रणाली (यानी वृटिश प्रणाली) का अनुकरण मात्र है। जिस प्रकार कलकत्ता विश्वविद्यालय एक खराब यानी लण्डन विश्व-विद्यालयका अनुकरण है। जेल संस्कारकेलिये हमें अमेरिकाके जेल खानोंकी व्यवस्थाका अनुसरण करना चाहिये।

इस परिवर्तनमें सबसे आवश्यक है एक नवीन मनो भाव, कैदियोंके प्रति सहानुभुतिका भाव होना, अपरा-धियोंकी अपराध प्रवृत्तिको मानसिक व्याधि ही मानना होगा। और इसके दूर होनेका उपाय हो ऐसी व्यवस्था ही करना होगा। प्रतिपोध मूलक दण्ड विधिको संस्कार-मूलक दण्ड विधिकेलिये रास्ता छोड़ देना होगा।

मैं नहीं समझता कि यदि मैं स्वयं कैदी न होता तो एक कैदीको सहानुभूतिकी नज़रसे देख सकता और

इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि यदि हमारे आर्टिस्टों और साहित्यिकोंमे जेल जीवन सम्बन्धी कुछ अभिज्ञता होती तो शिल्प और साहित्य कई अंशोंमें समृद्ध हो जाता। काजी नजरूल इस्लामकी कविता उनके जेल जीवनकी अभिज्ञताकी कितनी ऋणी है,शायद यह किसीने सोचा भी नहीं ।

मैं जब स्थिर भावसे सोचता हूं तो मेरे मनमे यह धारणा स्पष्ट हो जाती है कि हमारी भावना और कष्टों-के भीतर एक महान् उद्देश्य आपना काम कर रहा है। और यदि यही धारणा हर घड़ी हमारे जीवनमे अपना प्रभाव रखती तो हमारा दुख, कष्ट सब कुछ तिरोहित हो जाता। हां! इसी लिये तो आत्मा और शरीरमें निर-न्तर द्वन्द चला करता है।

कैदीकी अवस्थामें रहते हुए बन्दीके हृदयमे साधारण तया एक दार्शनिक भाव उठता है जो उसे बल प्रदान करता है, मैंने भी वहींपर अपने खड़े होनेके लिये स्थान बना लिया है,तथा दर्शनके विषयमें जो कुछ जाना सुना है वह और जीवन सम्बन्धी जो मेरी धारणा है वह भी इस समय मेरे काम आ रही है। मनुष्य यदि अपने भीतर खोजे तो सोचने लायक बहुत-सी बातें पा सकता है,

बन्दी होनेपर भी उसे कष्ट नहीं है यदि उसका स्वास्थ्य अक्षुण्ण हैं। किन्तु हमारा कष्ट तो आध्यात्मिक नहीं है, वह शारीरिक है, आत्माके तैयार होनेपर भी शरीर कभी-कभी दुर्बल हो जाता है।

लोकमान्य तिलकने जेलमें गीताकी समालोचना लिखी थी और मैं निसन्देह कह सकता हूं कि जेलमें वे भीतरसे सुखी रहे होंगे, किन्तु इसमें भी मुझे सन्देह नहीं है कि माण्डला जेलमें छ साल तक रहनाही उनकी अकाल मृत्युका कारण हुआ। यह मुझे मानना होगा कि जिस निर्जनतामें मनुष्यको जेल जीवन बिताना पड़ता है वही निर्जनता मनुष्यको बाहिरी वातावरणसे दूर कर जीवनकी गहनतम समस्याओंपर विचार करनेका सुयोग देती है। अपने सम्बन्धमें भी मैं कह सकता हूं कि साल भर यहां रहनेके कारण व्यक्तिगत और समष्टिगत अनेक समस्याओंका बहुत कुछ समाधान कर सका हूं। जो मतामत एक समय नितान्त साधारण तौरसे प्रकट किये जाते या सोचे जाते, आज वे स्पष्ट और अपने पूर्ण रूपसे मेरे सामने आ गये। और किसी तरफसे नहीं, जब तक जेलकी मीयाद खत्म नहीं होती न सही मैं आध्यात्मिकी दृष्टिसे बहुत कुछ लाभवान हो सकूंगा।

तुमने मेरे कारावास ग्रहणको एक प्रकारका Martyrdom कहा है। बेशक, यह कहना तुम्हारी गम्भीर अनुभूति और प्राणोंके महत्वका परिचायक है। किन्तु humour और proportion का मुझे थोड़ा बहुत ज्ञान है, इसलिये अपनेको Martyr अनुभव करनेकी स्पर्द्धा नहीं करता। स्पर्द्धा या आत्मदर्पसे दूर ही रहना चाहता हूं। हां, इसमें कितना सफल हुआ है, यह तुम्हारे जैसे मित्र ही कह सकते हैं। Martyrdom तो मेरे लिये एक आदर्श हो सकता है।

मेरा विश्वास है कि अधिक समय तक जेलमें रहने केलिये सबसे बड़ी मुसीबत यही है कि उसके अनजानमें ही बुढ़ौती उसे आ घेरती है। इसलिये इस ओर उसे विशेष ध्यान रखना चाहिये। तुम सोच भी नहीं सकते कि अधिक समय तक जेलमें रहनेके कारण आदमी कैसे शरीर और मनसे बुड्ढा हो जाता है। इसके अनेक कारण हैं, खराब खाना व्यायाम या स्फुर्तिका अभाव, समाजसे अलग रहना, अधीनताकी शृङ्खलाका भार, मित्रोंका अभाव और संगीतका अभाव, संगीतका अभाव सबसे अन्तमे उल्लिखित है किन्तु यह बहुत बड़ा अभाव है। अनेक अभावोंकी पूर्ति तो मनुष्य अपने अन्तरसे कर सकता है

किन्तु कुछकी पूर्ति बाहरसेही हो सकती है। इन सब बाहिरी चीजोंसे वंचित रहना अकाल वार्द्धक्यका मामूली कारण नहीं है। अलीपुर जेलमें युरोपियन कैदियोंके लिये सप्ताहमें एक दिन संगीतका प्रबन्ध है, पर हमारे लिये नहीं। पिकनिक, संगीत चर्चा, साधारण वक्तृता और खुली जगहमें घूमना तथा काव्य साहित्यकी चर्चा करना हमारे जीवनको कितना सरस और मधुर बना देता है यह हम साधारण जीवनमें अनुभव नहीं कर सकते परन्तु जब हमें जबरन बन्दी बनाकर रखा जाता है, तब समझमें आता है। जबतक जेलमें स्वास्थ्यकर और सामाजिक विधि व्यवस्थाका प्रबन्ध न होगा, उस समय तक कैदियोंके सुधारकी बात असंभव है। और तबतक जैल नैतिक उन्नतिका साधन न होकर वर्तमान अवनत अवस्थामें ही पड़ी रहेगी।

यह लिखना शायद उचित नहीं है कि अपने आदमियों, मित्रों प्रिय जनों और सर्वसाधारणकी सहानुभूतिसे मनुष्यको जेलमें भी अत्यन्त सुख होता है। यह भाव कैदीके मनमें सूक्ष्म रूपसे काम करता है, तब भी मैं अपने मनका विश्लेषण करके समझ पाता हूं कि यह भाव कुछ कम वास्तविक नहीं है। यह सहानुभूति प्राप्त करनेका भाव

साधारण और कैदियों राजनैतिक कैदियोंके भाग्यके फर्कको साफ कर देता है। जो राजनैतिक कैदी है, वह जानता है कि छुटकारा पानेपर समाज उसका सहर्ष स्वागत करेगा, किन्तु साधारणतः अपराधी इस तरहकी संभावना नहीं देखता। संभव है वह अपने घरके सिवा और कही भी सहानुभूतिकी आशा नहीं कर सकता,इसी लिये सर्वसाधारण को मुंह दिखानेमे उसे शर्म मालूम होती है। मेरे Yard मे जो कैदी काम करते है उनमे कुछ कैदी कहते है कि उनके घरवालोको मालूम ही नही कि जेलमें है। वे शर्मके मारे घरपर किसी तरहका संवाद नही भेजते। यह परिस्थिति बड़ी असन्तोषजनक मालूम होती है। सभ्य समाज अपराधियोंके प्रति अधिक सहानुभूतिशील क्यों न बने?

जेल जीवनकी अभिज्ञता और उससे उठनेवाले विचारोंसे पन्नेपर पन्ने लिख सकता हूं। पर एक चिट्ठीका भी तो कहीं अन्त होना चाहिये। विशेष शक्ति और उद्यम होता तो इस विषयपर एक पुस्तक लिखनेकी चेष्टा करता किन्तु ऐसी सामर्थ्य नही है।

मैं जेलके कष्टको शारीरिक न मानकर मानसिक माननेका पक्षपाती हूं। जहां अत्याचार और अपमानका

आघात यथा संभव कम हो आता है वहां बन्दी जीवन उतना यंत्रणा दायक नहीं होता। किन्तु इस तरहका सूक्ष्म आघात ऊपरवालोंकी तरफसे होता है, जेलके अधिकारियोंका इसमें कुछ हाथ नहीं रहता। ये जो आघात और उत्पीड़न हैं वे मनुष्यके मन को आघात करनेवालेके प्रति और भी विकृत कर देते हैं और इसीसे मनमें होता है कि ये आघात व्यर्थ हैं। इनसे हम अपना पार्थिव अस्तित्व भूल जाते हैं और अपने हृदयमें आनन्दधामकी प्रतिष्ठा करते हैं। इसी लिये ये आघात हमारी स्वप्नाविष्ट आत्माको जगाकर हमें बल देते हैं, कहते हैं कि हमारे आस-पासकी अवस्था कितनी कठोर और निर्मम है।

तुमने कहा, रोज रोज मनुष्यके आंसू पृथ्वीकी नीचीसे नीची तहोंको भिगाते चले जा रहे हैं,—यह दृश्य तुम्हें प्रतिदिन गम्भीर और विषण्ण बना रहा है। किन्तु ये आंसू, दुखके ही आंसू नहीं हैं, उनमें करुणाश्रु और प्रेमाश्रु भी हैं। समृद्धतर और प्रशस्ततर आनन्द स्रोतपर पहुंचनेकी संभावना होनेपर आपत्तियोंके छोटे मोटे गढ़ोंको पार करनेसे क्या तुम इन्कार कर देते? मैं खुद तो दुखवाद और निराशाका कोई कारण नहीं देखता, बल्कि मनमें यही होता है कि दुख और यंत्रणा

उन्नततर कर्म और उच्चतर सफलताको प्रेरणा ला देगी। तुम क्या समझते हो कि बिना दुख कष्टके जो मिलता है, उसका कुछ मूल्य है?

कुछ दिन पहले तुमने जो किताबें भेजी थीं वे सब मिल गयीं। किन्तु अब उन्हें वापिस नहीं कर सकता, क्योंकि उनके पढ़नेवाले बहुत हो गये हैं। तुम्हारी रुचि जितनी अच्छी है, उस हालतमें यह कहना अनावश्यक है कि तुम जो किताबें भेजोगे वे सादर गृहीत होंगी। इति—

माण्डला जेल

२५-६-२५

प्रिय दिलीप,

अन्तिम चिट्ठीके बाद तुम्हारी कुल तीन चिट्ठियां मिलीं। चिट्ठियोंकी तारीखें हैं, ६ मई, १५ मई, १५ जून।

तुम्हारा भेजा हुआ किताबोंका पार्सल मिल गया। तुर्गनेवकी Smoke नामक किताब नहीं मिली। पार्सल आफिसमें खोला गया था, इसलिये सुपरिण्टेण्डेण्टसे इस विषयमें कह रखा है। जरूरत होनेपर कलकत्तेकी C. I. D. से वे पूछेंगे,तुम भी D. I. G. C. I. D. को लिख कर ध्यानाकर्षण कर सकते हो।

Bertrand Russel की "Prospects of Indus

trial Civilisation" नामक पुस्तक बहरमपुर जेलमें कई कैदियोंके पास है। मैं जब स्थानान्तरित किया गया तब अनेक इस किताबको अपने पास रखना चाहते थे। इसकी तुम्हें जरूरत न होगी यह समझकर वहीं छोड़ आया था। रसलकी किताबोंका इतना आदर है कि कोई पाकर देना नहीं चाहता। बहरमपुरके सुपरिण्टेण्डेण्टको लिखा है कि वे तुम्हारे पास किताब भेज दें। तुम भी उन्हें एक पत्र लिख देना, तकादा हो जायगा। तुम्हारा काम अटक गया इसके लिये बड़ा दुःखी हूं किन्तु तुम समझ सकते हो कि मैं उस समय नहीं समझ सका था कि तुम्हें इसकी इतनी सख्त जरूरत पड़ेगी। "Free Thought and Official Propaganda" मेरे पास नहीं है, यह किताब तुमने मेरे पास नहीं भेजी।

किताब चुनदेनेकेलिये अनेक धन्यवाद। हम लोग सब आशा करते हैं कि जो काम तुमने शुरू किया है, वह भगवानकी कृपासे अच्छी तरह चलेगा। तुम्हारे लेख मैं सम्मान सहित पढ़ूंगा, यह कहना न होगा। किताब प्रकाशित करते समय कवरकी तरफ ध्यान रखना, बंगवाणीमें रवीन्द्रनाथपर लिखा हुआ एक लेख देखा, मैंने अभी उसे पढ़ा नहीं है किन्तु विषय चित्ताकर्षक मालूम पड़ता है।

तुम जानते हो आजकल मेरे मनको क्या आच्छादित किये रहता है। मैं जानता हूं हम सब एक ही विषयको सोचते हैं, वह है महात्मा देशबन्धुका देहत्याग। अखबारमें जब यह समाचार पढ़ा तब अपनी आंखोंका विश्वास नहीं हुआ किन्तु हाय! संवाद नितान्त सत्य था। मालूम होता है, हमारी जातिका भाग्य ही फूटा है। जो विचार मेरे मनमें आन्दोलित हो रहे हैं, उनको प्रकाशित कर मनको हलका करनेकी इच्छा होनेपर भी मुझे कष्टकोही संयत करना होगा। जो सब बातें इस समय मनमें आ रही हैं वे इतनी पवित्र, इतनी मूल्यवान हैं कि अपरिचितके सामने प्रगट नहीं की जा सकतीं। Censor को अपरिचित न मानूं यह कैसे हो सकता है? मैं सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि देशबन्धुके न रहनेसे देशकी अपूर्व क्षति तो हुई ही, बंगालके युवकोंका तो सर्वस्वही चला गया। सचमुच इस घटनाने मुझे स्तम्भित कर दिया।

आज मैं इतना शोकाच्छन्न और विचलित हूं, साथ ही साथ मनोजगतमें उन महात्माके इतना निकट पहुंच गया हूं कि उनकी गुणावलिके सम्बन्धमें कुछ भी विश्लेषण करना असम्भव है। मैंने उनके पास रहकर, बिलकुल

सहज अवस्थामें उनके जो रूप देखे थे, समय आने-पर दुनियाको उनका कुछ आभास दे सकूंगा ऐसी आशा है। मेरे समान उनके बारेमें जो अनेक बातें जानते हैं, वे कह सकनेपर भी, आज कुछ कह नहीं सकते, चुप हैं, डर होता है कि उनके महत्वका पूर्ण परिचय न दे सकने-की अक्षमताके कारण उन्हें सकुंचित करके न दिखा दें।

तुम जब कहते हो कि खैर कोई कष्ट नहीं है, तब मैं तुमसे एकमत होता हूं। जीवनमें ऐसी ट्रेजडी होती है, जैसी कि हमारे ऊपर आ गयी, किन्तु उसे मैं सानन्द ग्रहण नहीं कर सकता। मैं इतना बड़ा तत्व-ज्ञानी या पाखण्डी नहीं हूं कि कह सकूं कि मैं सब तरहका दुख सहर्ष वरण कर सकता हूं। अनेक ऐसे अभागे हैं—मुमकिन है वे भाग्यवान ही हों—जो मानो सब तरहका दुख कष्ट भोगनेकेलिये ही पैदा हुए हैं। अधिक हो या कम, यदि किसीको कटोरेभर दुख ही पीना पड़े तो अपने आपको भूलकर ही पीना अच्छा है। किन्तु आत्म समर्पण या आत्मनिवेदनका यह भाव चीनकी दीवारकी तरह सब आघातों और कष्टोंसे रक्षा नहीं भी कर सकता है। हां,— यह आत्म-समर्पण हमारी सहन शक्तिको बहुत कुछ बढ़ा देता है, इसमें शक नहीं। वरटण्डने कहा है,

जीवनमें ऐसी ट्रेजेडी भी है, जिसके हाथसे मनुष्य छुट-कारा ही चाहता है, यहां उन्होंने बिलकुल सांसारिक व्यक्तिका मत प्रकट किया है। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि जो सिर्फ निष्कलंक साधु बनता है या साधुत्वका प्रदर्शन करता हैं, वह पाखण्डी है और वही इस बातका प्रतिवाद कर सकता है।

जो भावुक या तत्व ज्ञानी हैं उनकी यन्त्रणा सम्पूर्ण रूपसे निरविच्छिन्न है, यह समझना ठीक नहीं है। तत्व ज्ञानहोनों (abstract point of view से मैं उन्हें तत्व ज्ञानहीन कहता हूं) का भी अपना एक idealism है। उसे वे पूजाट्ठ समझते हैं, श्रद्धा और प्रेम करते हैं। नाना प्रकारके दुख और यंत्रणाके साथ युद्ध करते समय वे उसी प्रेमसागरसे साहस और भरोसा पाते हैं। यहां मेरे साथ जिन्होंने कारावासकी यन्त्रणाभोगी है, उनमें अनेक ऐसे हैं जो भावुक या दार्शनिक नही हैं। तब भी वे शान्त भावसे यन्त्रणा सहते हैं, वीरकी तरह सहते हैं। Technical अर्थमें वे दार्शनिक न हों पर मैं उन्हें सम्पूर्ण रूपसे भाव विवर्जित भी नहीं समझ सकता। संभवतः संसार में जो कर्मी हैं,उनसबके बारेमें यही बात कही जा सकती है। सर्वसाधारणके मनमें यह धारणा है कि कैदी जब फां-

सीके तख्तेपर ले जाया जाता है तब उसमें एक तरहकी स्नायविक दुर्बलता आ जाती है, सिर्फ वे ही वीरकी तरह मर सकते हैं जो किसी महान् उद्देश्यकी सिद्धिके लिये प्राणोत्सर्ग करते हैं। यह धारणा ठीक नहीं है। इस सम्बन्धमें मैंने कुछ तथ्य संग्रह किये हैं तथा इस सिद्धान्तपर पहुंचा हूं कि अधिकांश अपराधी साहसके साथ मरते हैं और फांसीकी रस्सी गलेमें पहनाये जाने-के पहले भगवानके चरणोंमें अपनेको निवेदित कर देते हैं। बिलकुल किंकर्तव्य विमूढ़ होकर पड़ जानेवाले विशेष दिखलायी नहीं पड़ते। जेलके एक अध्यक्षने मुझे बत-लाया था कि एक दिन एक कैदीने फांसीके तख्तेकी ओर जाते हुए कहा था कि सचमुच उसने हत्या की थी। उससे पूछा गया कि तुम्हें अपने कामके लिये अनुताप है क्या? तो उसने बतलाया कि वह अपने कामकेलिये जरा भी अनुतप्त नहीं है, क्योंकि जिसकी उसने हत्या की, उसे मार डालनेके कारणोंसे वह सन्तुष्ट था। उस-ने वीरकी तरह फाँसीके तख्तेपर पैर रखा और वीरकी तरह प्राण दिये किन्तु उसकी एक नस भी संकुचित नहीं हुई।

अपराधियोंके मनस्तत्वकी आलोचना कर मेरी आंखें

खुल गयीं। मैं अब सोचता हूं साधारणतया उनके प्रति अ-
विचार किया जाता है। उस बार यानी १६२२ में मैं जब
जेलमें था, उस समय एक कैदी मेरे yard में नौकरका
काम करता था। उस समय मैं महाप्राण देशबन्धुके साथ
एक ही स्थानपर रहता था। देशबन्धुके प्राण बड़े सदय
थे, इसीलिये वे सहजभावसे ही कैदीके प्रति आकृष्ट हो
गये थे। वह पुराना पापी था, आठबार सजा भोग चुका
था। किन्तु न जाने कैसे वह भी देशबन्धुके प्रति अनुरक्त
हो उठा था तथा आश्चर्यदायक शक्तिका परिचय दिया
था। छूटनेके समय देशबन्धुने उससे कहा था कि जेलसे
छूटनेपर मेरे साथ बराबर मिला करना, पुराने साथियों-
के साथ अब मत मिलना। कैदी राजी हो गया था और
कहनेके अनुसार काम भी किया था। तुम्हें सुनकर
आश्चर्य होगा कि वह व्यक्ति एक दिन पुराना दागी था,
जेलसे आनेपर वह उनके घर रहा था, तथा बीच-बीचमें
अभद्र व्यवहार करनेपर भी अब सरल भावसे ही जीवन
यापन करता है तथा देशबन्धुके न रहनेसे जिनकी अपार
क्षति हुई है उनमेंसे वह भी एक है। अनेक कहते हैं कि
छोटी और तुच्छ घटनासे ही मनुष्यके महत्वका विचार
करना चाहिये। यह बात सत्य हो तो देशका उन्होंने जो

कुछ उपकार किया है उसे छोड़ भी दिया जाय तो कहा जा सकता है कि वे एक महापुरुष थे।

मैं अपनी असली बातसे बहुत दूर आ गया, अब मुझे रुकना होगा। तुम्हारी चिट्ठीका जवाब पूरा पूरा नहीं दे सका किन्तु अधिक देर करनेसे आजकी डाक छूट जायगी। मैं जानता हूं तुम मेरा पत्र पानेकेलिये उद्विग्न होगे। इसलिये यह चिट्ठी आजकी डाकसेही छोड़ना होगा। अगले पत्रमें और समाचार लिखूंगा। इति—

दलादलि और बंगालका भविष्य

(श्री भूपेन्द्रनाथ वंद्योपाध्यायको लिखा एक पत्र)

मण्डला जेल

प्रियवरेषु,

आपका २-५-२६ का पत्र पाकर आनन्दित हुआ, उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ, क्षमा करेंगे। इस समय मैं अनेक वातोंमें अपना मालिक नहीं , यह तो आप समझते ही होंगे। आपके पत्रसे भवानीपुरके सब समाचार पाकर सुखी और दुखी हुए विना नहीं रह सकता। आज

बंगालमें दलादलि और झगड़ा झंझट ही अधिक है और जहांपर जितना कम काम है,वहां उतना ही अधिक झगड़ा है। भवानीपुरमें कुछ काम होता है इसी लिये झगड़ा कुछ कम है, किन्तु जो कुछ भी है निसपक्ष आदमी उससे म्रियमाण हुए बिना नहीं रह सकता। मैं सिर्फ यही सोचता हूं कि झगड़ा करनेकेलिये इतने आदमी मिल मिल जाते हैं, पर मीमांसा कर देने वाला एक भी आदमी बंगालमें नहीं है ? इसी दलादलिके कारण बंगालने आज अनिलवरण जैसे स्वदेश सेवकको खो दिया। और कितने सेवकोंको नहीं खो देगा, कौन जानता है ? बंगाली आज अन्धे हो रहे हैं, कलह विवादमें निमग्न हैं, इसीलिये यह बात समझकर भी नहीं समझ पाते। निस्वार्थ आत्म-दानकी बात तो अब सुनाई नहीं पड़ती। एक महाप्राण शून्यमें मिल गया, अग्निमय प्रकाशसे युक्त त्यागकी मूर्ति धारण कर वह हमारे सामने आया,उसी दिव्यालोकके प्रभावसे बंगालीने क्षणभरकेलिये स्वर्गका परिचय पाया;किंतु फिर वह आलोक भी लुप्त हो गया और बंगाली भी स्वार्थकी तलैयामें फंस गये। आज बंगालभरमें अधिकारके लिये कशमकश हो रही है। जिसके पास अधिकार है वह उसे बचाये रखनेकेलिये प्रयत्नशील है। दोनों

पक्ष कहते हैं; देशोद्धार होगा तो हमारे ही द्वारा होगा, नहीं तो नहीं होगा। इन अधिकार-लोभी राजनितिज्ञोंके झगड़ोंसे अलग रहकर चुपचाप आत्मोत्सर्ग करता रहे, ऐसा स्वदेशसेवी बंगालमें आज नहीं है क्या? अपनी intellectual और spiritual उन्नतिकी अवहेलना कर जिन्होंने देशसेवामें आत्मनियोग किया है, वे भी यदि क्षुद्रातिक्षुद्र बातोंमें सबको झगड़ते देखकर निराश होकर राजनीति क्षेत्रसे अलग हो जायं, इसमे आश्चर्य क्या है? अपने मानसिक और पारमार्थिक कल्याणको तुच्छ मान जिन्होंने देशहितका व्रत लिया है, वे क्या इन क्षुद्र झगड़े झंझटोंमें अपनेको डुबा देंगे? जन-सेवासे निराश होकर यदि वे फिर पारमार्थिक कल्याणमें मन लगावें तो क्या उनको दोष दिया जा सकता है? आज मैं स्पष्ट समझ रहा हूं कि समाजकी यही हालत रही तो न जाने कितने समाजसेवी अनिलवरणका पथ अवलम्बन करेंगे।

आज बंगालके अनेक कार्यकर्ताओंमे व्यवसायी और पटवारी बुद्धि जाग पड़ी है। वे अब कहने लगे हैं, हमें क्षमता दो, पद दो, अथवा हमे कार्यकारिणीका सदस्य बनाओ, नहीं तो हम काम नहीं करेंगे। मैं पूछना चाहता हूं नरनारायणकी सेवा व्यवसाय बुद्धिसे, contract से

कबसे होने लगी ? मैं तो जानता था कि सेवाका आदर्श यही है :—

"दाओ दाओ, फिरे नहि चाओ,
थाके जोदि हृदये सोम्बल।"

जो बंगाली इतना जल्द देशबन्धुके त्यागकी बात भूल गया, वह कुछ दिन पहलेकी विवेकानन्दकी वीरवाणी भूल जायगा, इसमें विचित्रता क्या है ?

दुखकी बात, कलंककी कहानी सोचते-सोचते कलेजा फटने लगता है। प्रतिकारका उपाय नहीं, करनेकी क्षमता नहीं, इसीलिये अक्सर सोचता हूं, चिट्ठी पत्री लिखना बन्द कर दुनियाके साथका बाहरी सम्बन्ध बिलकुल तोड़ दूं। सकूंगा तो लोगोंकी नजरोंसे ओझल होकर तिल-तिलकर जीवन देकर इसका प्रायश्चित्त कर जाऊंगा। इसके बाद यदि ऊपर भगवान हों, यदि सत्यकी प्रतिष्ठा हो,तो मेरे हृदयकी बात देशवासी एक न एक दिन समझेंगे ही। देशके नामपर एक इतना बड़ा प्रहसन देखूंगा, 'Nero is fiddling while Rome is burning' का एक नवीन उदाहरण आंखोंके सामने आयेगा—किसी दिन यह सोचा भी नहीं था।

बहुत कुछ कह गया, हृदयका आवेग दबाकर न रख

सका। आपलोगोंको बिलकुल अपना समझता हूं इस-
लिये इतनी बाते लिखनेका साहस हुआ। आपलोग संग-
ठन-मूलक काम कर रहे हैं, आशा है आप इस दलादलिके
कीचड़से अलग रहेंगे।

विद्यालयका समाचार पाकर विशेष आनन्दित हुआ।
किन्तु मकानकी बात पढ़कर बिना दुखी हुए न रह सका।
किन्तु यह बात मैं पहलेसे ही जानता हूं तथा चण्डीबाबू
आदिसे इसके परिणामके सम्बन्धमें कह भी चुका था।
मैं हमेशा सोचता कि स्कूलके अधिकारियोंने unbusiness
like ढंगसे जमीन लीज लेकर मकान बनवानेका काम शुरू
कर दिया था जिसके फलस्वरूप जमीनदारको ही फायदा
हुआ। जाने दो, अब तो 'गतस्य शोचना नास्ति।" आप-
लोग जरा भी ना उम्मीद न हो कर "गृह निर्माण" के
लिये धन संग्रह कर रहे हैं, यह अत्यन्त आशाप्रद है।
आपका प्रयत्न सफल होगा इसमे मुझे सन्देह नहीं है,
क्योंकि, "नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात! गच्छति"

समितिके तमाम समाचार जानकर बहुत सुखी हुआ।
आपलोग मेहतर चमार आदि छोटी जाति कहलानेवालों-
के बालकोंकेलिये एक विद्यालय खोल सके तो बहुत
अच्छा हो। इस विषयमें अमृतके साथ सलाह करियेगा,

बहुत दिन हुए मुझे उसका एक पत्र मिला था। दुःख है कि उत्तर न दे सका। आज कुलदाको पत्र लिखा है, आशा है आगामी सप्ताह अमृतको पत्र लिखूंगा।

कहना न होगा कि मैं रहता तो आपलोगोंको अलग न होने देता, हां भिन्न शाखा स्थापित करनेका प्रस्ताव मैं अवश्य करता, खैर जो हुआ सो हुआ। आपलोगोंने Constitution बनाके अच्छा ही किया।

आशा है चावल, चन्दा संग्रहके सम्बन्धमें बालक समितिके साथ आपका तनाव न होगा। एक ही स्थानमें यदि अनेक समितियां चावल, चन्दा लेना आरंभ करदें तो गृहस्थ ऊब उठते हैं, यह बात ध्यान रखना चाहिये।

मेरा खयाल है कि यदि आप दो एक कार्यकर्ताओंको कासिमबाजार पोलिटेकनिकमें भेज कर कुछ सिखला ले सकें तो technical शिक्षाकी विशेष सुविधा होगी। मैं एक बार कासिमबाजार स्कूल गया था, स्कूल मुझे बहुत पसन्द आया, वे कई ऐसी नयी चीजें सिखलाते हैं जो अन्य स्कूलोंमे नही सिखलायी जातीं, जैसे बेतका काम, clay modelling, सिलाई, electroplating आदि। मैं जब गया था तब electroplating के लिये मैशीनरी खरीदी जा रही थी।

आपका भेजा हुआ विद्यालय और समितिका con-stitution मिला।

स्वास्थ्य विभागका काम ठीक नहीं हो रहा है, यह बड़े दुःखकी बात है, इसका कारण यह है कि जनसाधारणको ठीक तरहसे आकर्षित नहीं किया जा सका। ठीक ढङ्गसे पुकारनेपर जनता बिना प्रत्युतर दिये नहीं रह सकती। स्वास्थ्य विभागके उद्देश्यसे दातव्य चिकित्सालयका उद्देश्य बिलकुल भिन्न है। जनतामें यदि कर्म-प्रेरणाको जाग्रत करना है तो प्रेम द्वारा उन्हें अपना बनाना होगा।

संभवत, आप नहीं जानते कि दक्षिण कलकत्ता सेवाश्रमकी त्रुटिके लिये मैं जिम्मेदार हूं। बाहर रहनेके कारण मैं इसे ठीक organise नहीं कर सका। फिर एकाएक गिरफ्तार कर लिया। जिस समय सेवाश्रम कालीघाटमें था, उस समय मकान भाड़ा और सहकारी मंत्रीका वेतन मैं खुद देता था। सिर्फ बालकोंके भोजनादिका खर्च सर्व साधारणके दानके भरोसे चलता था। सेवाश्रमके संबंधमें मेरा clear conscience है, क्योंकि जनताके दिये हुए द्रव्यमेंसे मैंने एक पाईका भी असद्व्यवहार नहीं किया। मेरी गिरफ्तारीके बाद भी जो मैं देता था उसे मेरे बड़े

भइया देते आ रहे हैं। किन्तु अब आय बढ़ी है और खर्च घटा है इसलिये पहले जितना रुपया नहीं देना पड़ता। जिस समय मैं दो सौ रुपया खर्च किया करता था, उस समय कुछ मित्र कहते थे कि पांच सात बालकोंकेलिये मैं व्यर्थ ही खर्च करता हूं। किन्तु उन्हें नहीं मालूम कि मनकी तरंगसे ही मैं यह काम नहीं कर रहा हूं, बल्कि प्रायः १२।१४ वर्षसे जो आग मुझे जला रही है, उसीके शयनकेलिये मैंने इस काममें हाथ दिया है। मैं कांग्रेसको छोड़ सकता हूं किन्तु सेवाश्रमका काम छोड़ना मेरे लिये असम्भव है। दरिद्रनारायणकी सेवाका ऐसा प्रकृष्ट अवसर कैसे छोड़ा जा सकता है? सेवाश्रमके पीछे कितना इतिहास छिपा हुआ है, सेवाश्रमकी कल्पना क्यों और कैसे मेरे दिमागमें आयी, कैसे मैं विचारमय जगत्‌से कर्ममय जगत्‌में आया, ये सब बातें किसी और समय लिखूंगा। पत्रमें लिखनेकी चेष्टा करूंगा तो पत्र किताब बन जायगा।

बहुत बातें लिखीं, अब बन्द करूं। मेरी बात पूछी है क्या उत्तर दूं। रवि बाबूकी एक कविता मुझे बहुत पसन्द है। कविकी भाषामें उत्तर देना क्या धृष्टता होगी? कवियोंका आदर इसीलिये अधिक है वे हमारे

हृदयकी बात अपेक्षाकृत साफ और विकसित रूपसे व्यक्त कर सकते हैं।

ए खोनो चिहार फोल्प जोगते
लेल खाना (ओरण्य) राजधानी
ए खोनो केवल नीरब भावना
कोर्म विहीन विजन साधना
दिवा निशि सुधु बोसे बोसे सोना
आपन मोर्म बानी

* * *

मानुष होते छि पापाणेर कोले

* * *

गोड़िते छि मोन आपनार मोने
जोग्य होते छि काजे

* * *

कोबे प्राण खूलि बोलिते पारिबो
पेयेछि आमार शेष।
तोमरा सोकले एसे मोर पिछे
गुरु तोमादेर साबारे डाकिछे,
आमार जीवने लभिया जीवन
जागरे सकल देश

शरीर अभी उतना अच्छा नहीं है, मगर उसके लिये चिन्ता भी नहीं है। अमृत प्रभृति कैसे हैं? आप लोगोंका कुशल समाचार पढ़कर अत्यन्त सुख होगा। पर कामका समय बरबाद कर पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। मेरा प्रीति पूर्ण नमस्कार स्वीकार कीजियेगा। इति
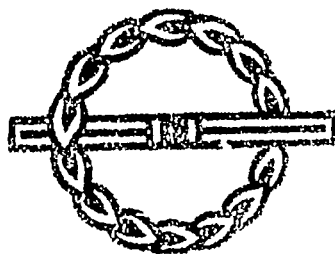
हिन्दू-मुस्लिम पैक्ट

माण्डला जेल

मैंने आपका इस्तहार और श्रीयुक्त सेन गुप्त लिखित उसका प्रतिवाद पढ़ा है। अब तक श्रीयुक्त सेन गुप्तके प्रतिवादका कोई उत्तर नहीं देखा। पैक्टके फिर ग्रहण करनेकी बात उठ ही नहीं सकती। सिराजगंजमें जब पैक्ट स्वीकृत हुआ था, तब इसके खिलाफ एक दल था जो मूक था। देशबन्धु यह जानते थे और उन्होंने एक बार नहीं, बार बार साफ कह दिया था कि उनका उद्देश्य देशके दो भिन्न सम्प्रदायोंके मिलनेकी एक स्पष्ट भित्ति स्थापित करना है।

इसलिये यदि इस पैक्टका कुछ अंश या कुछ धाराएं उद्देश्य साधनके विपरीत या ग्रहणके अयोग्य समझी जायं तो उनके परिवर्तनमें भी देशबन्धुको आपत्ति नहीं थी। जहां तक मुझे याद है शायद कोकनाडा कांग्रेसमें उन्होंने यह भी कहा था कि बंगाल पैक्ट इसी समय कांग्रेस ग्रहण कर ले, यह वे नहीं चाहते। उनकी इच्छा थी कि यह पैक्ट अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा आलोचित हो।

किन्तु उस समय कांग्रेस उसकी घोर विरोधी थी, तथा कांग्रसके सभ्य उस पैक्टकी आलोचना करनेके लिये तैयार नहीं थे। कोकनाडा कांग्रेसके बाद सिराजगंजमें यह पैक्ट गृहित हुआ था। मैं वहां ही उपस्थित नहीं था किन्तु पैक्ट ग्रहण करनेके पहले भी देशबन्धुने सबको आश्वासन दिया था कि वे किसी तरहके तर्क या समझौतेकी बात नहीं सुनेंगे सो बात नहीं, बल्कि वे पैक्टके किसी अंश या धाराके परिवर्तनकी जरूरत होनेपर वैसा करनेकेलिये तैयार थे।

इसलिये मेरा खयाल है कि देशबन्धुका अनुरक्त भक्त रहते हुए भी पैक्टके किसी किसी अंशके परिवर्तनकी मांगकी जा सकती है। साथ ही साथ मैं यह भी समझ

रहा हूं कि सिर्फ देशबन्धुका ही या उनके न रहने-पर बङ्गालकी समस्याका समाधान करनेके लिये अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका ही मुंह ताकनेसे काम नहीं चलेगा। हिन्दू मुस्लिम समस्या अखिल भारतीय रूपसे हल होनेपर भी, बङ्गालकी हिन्दू मुस्लिम समस्याका समाधान बङ्गालीको ही करना होगा।

समाचार पत्रोंके पढ़नेसे जहांतक सम्भव हो सकता है, घटनाओंके सिलसिलेको समझ कर मैंने कुछ दृढ़ धारणाएं की हैं। उनमेंसे एक यह है कि वर्तमान विपद्-संकुल समयमें हमें जिस चीजका सबसे अधिक अभाव है, वह है सब विषयोंमें स्पष्ट दूरदर्शिता। इति—

जेल-मुक्तिके प्रस्तावका उत्तर

इनसिन सेन्ट्रल जेल
४ अप्रैल १९२७

बड़े भइया !

मिस्टर मोवार्लीके प्रस्तावके सम्बन्धमें मेरी क्या राय है, यह जाननेकेलिये निश्चय ही आप लोग उत्कण्ठित हो रहे होंगे और मेरा खयाल है इस सम्बन्धमें अपना मतामत प्रकट करनेका समय आ गया है। मेरी रायसे आप लोगोंकी राय मिलेगी या नहीं, नहीं जानता। तब भी मेरे मतकी चाहे जो भी कीमत क्यों न हो; नीचेकी पंक्तियोंमें उसे प्रकट कर रहा हूं।

मैंने अत्यन्त संयत होकर मिस्टर मोवालींके प्रस्ताव-को पढ़ा। उनके प्रत्येक शब्द और प्रत्येक बातपर बार-बार विचार किया और उससे मैं इस नतीजापर पहुंचा हूं कि यह तो मानना ही पड़ेगा कि उन्होंने अत्यन्त साव-धानीके साथ अपने वक्तव्यके शब्द चुने हैं और खूब सोच समझकर उन्हें प्रकट किया है। उनके प्रस्तावके सब पह-लुओंको अच्छी तरह सोचनेके बाद आज मैं अपना मत प्रकट कर रहा हूं। इस समय मैं आपको जो कुछ भी लिख रहा हूं उसे अनेक बार सोचकर निश्चय किया है। तब भी मुझसे यदि कोई भूल हो गयी हो तो जाननेपर उसपर फिर विचार करनेकेलिये प्रस्तुत हूं।

पहले ही कह देता हूं कि मिस्टर मोवालींकी स्पष्ट-वादिताकी मैं प्रशंसा करता हूं और सोचता हूं उनकी ही तरह यदि मैं भी सब बातोंको स्पष्ट रूपसे व्यक्त न करूंगा तो बड़ा अन्याय होगा, तथा मेरा कर्तव्य भी अधूरा रह जायगा। स्पष्टवादितामें मेरा हमेशा ही विश्वास रहा है और मैं समझता हूं साफ-साफ कहनेसे दोनों पक्षोंको अन्तमें लाभ ही होता है।

मिस्टर मोवालींकी कई बातोंके लिये मैं उन्हें धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता, खासकर जहांपर उन्होंने कहा है

कि वे मेरे अतीत कार्य-कलाप और भविष्यकी गतिविधि-के लिये किसी तरहकी स्वीकारोक्ति नहीं चाहते। उन्होंने कहा है कि मैं यदि प्रतिज्ञा करके कहूं तो वे मुझे छोड़ देंगे। अन्तमें उन्होंने कहा है कि पहले उन्होंने यह प्रस्ताव मेरे सामने इसलिये नहीं रखा, कि ऐसा होनेसे मनमें यह बात मेरे मनमें आ सकती थी कि प्रस्ताव स्वीकृत करनेकेलिये मुझे बाध्य किया जा रहा है। इन अंशोंको पढ़कर समझा हूं कि वे मुझे आत्म-सम्मान विशिष्ट सज्जन पुरुष समझते हैं और निम्नलिखित कारणोंके कारण उनके प्रस्तावमें मेरे प्रति जो सम्मानजनक अंश है उसकी उपलब्धि मैंने की है। अन्तमें बङ्गीय कानून सभाके सदस्यकी हैसियतसे माननीय सभ्यके इस तरहके व्यवहारकी प्रशंसा किये बिना भी मुझसे नहीं रहा जाता। क्योंकि मेरा खयाल है कि कौंसिल के सभ्योंके प्रति आस्था स्थापनकर किसी प्रस्तावका सर्वप्रथम उनके सामने उपस्थित करनेका निदर्शन यह सर्व-प्रथम ही है।

मेरा खयाल है कि मिस्टर मोबार्लीको प्रस्तावके सम्बन्धमें अपनी तरफसे कुछ नहीं कहना है।

सबसे पहले एक विषयके सम्बन्धमें आपके मनमें जो

धारणा है उसे दूर करना चाहता हूं। भइया (डा० सुनी-लचन्द्र वसु) की रिपोर्टके साथ मेरे मतामतका कुछ सम्पर्क नहीं है। क्योंकि रिपोर्ट लिखनेके पहले या बाद, वे क्या लिखेंगे या मेरे लिये क्या सिफारिश करेंगे इस सम्बन्धमें उन्होंने मेरे साथ कोई बात या परामर्श नही किया। मुझे यदि वे पहले बतलाते तो मैं अवश्य ही स्विटजरलैण्ड भेजनेके प्रस्तावके अनुमोदनका विरोध करता।

इस तरहका प्रस्ताव भेजनेके बाद जब उन्होंने मुझसे इस प्रस्तावके बारेमें कहा था, तभी मैंने सन्देह किया था कि इसका फल अच्छा न होगा, आखिर मेरा सन्देह सत्य सिद्ध हुआ। भइया डाक्टर की हैसियतसे मेरे स्वास्थ्यकी परीक्षा करने आये थे और डाक्टरकी हैसियतसे ही उन्होंने अपना मत प्रकट किया था, मेरा खयाल है कि ऐसा कर उन्होंने समदर्शी चिकित्सक और अभिज्ञ वैज्ञानिकके व्यवहारकाही परिचय दिया, किन्तु उनके इस मतकी राजनैतिक व्याख्या कैसी हो सकती है तथा सरकार ही इसे राजनैतिक चाल चलनेकेलिये किस तरह व्यवहार करेगी, इसका विचार करनेकी उन्हे कोई जरूरत नही थी। इसलिये मैं भी उनके इस कार्यकी निन्दा नहीं कर सकता। उनके कई रोगी स्विस आरोग्य आश्र-

मर्में जाकर रोग मुक्त हुए हैं, यह देखकर उन्होने मेरे लिये भी वही सिफारिश की जो अन्यान्य यक्ष्मा रोगियोंके लिये की थी। जो धनवान रोगी स्विटजर लैण्डके रहनेका और दवा-पानीका खर्च सहन कर सकते हैं उनके लिये यह सुझाव सर्व श्रेष्ठ है। किन्तु यह स्पष्ट है कि इस तरहके किसी प्रस्तावसे मैं अपनेको किसी तरहसे वाध्य नहीं समझ सकता।

सरकारने भाई साहबके रोग विवरणको स्वीकार नहीं किया किन्तु स्वास्थ्य प्राप्तिके लिये उनके प्रस्तावको स्वीकार कर लिया, क्योंकि मिस्टर मोवार्ली-ने कहा है कि; "सुभाषचन्द्र बोस अधिक पीड़ित नहीं हुए और काम करनेसे बिलकुल ही लाचार नहीं हुए यह सभी जानते हैं।" मैं यह जानना चाहता हूं कि सरकार मुझे कब "अत्यधिक पीड़ित" और "काम करनेसे बिल-कुल लाचार" समझेगी? जिस दिन सब चिकित्सक कहेंगे कि मैं रोगसे छुटकारा नहीं पा सकता और कुछ महिनोंमें ही मेरी मृत्यु हो जा सकती है, तब क्या? इसके सिवा वे यदि भइयाका दिया हुआ रोग विव-रण स्वीकार नहीं करते तो फिर जिससे उसका बाहिरी अनुमोदन होता है उसे ग्रहण करनेको इतने व्यस्त क्यों

हैं ? उन्होंने तो यह नहीं कहा कि मुझे घर नहीं जाने दिया जाय या विदेश जाते समय मैं अपने आत्मीय स्वजनोंको न देख सकूं। उन्होंने यह भी नहीं कहा कि मैं जिस जहाजसे जाऊंगा, वह किसी भारतीय बन्दर पर लङ्गर न डाल सकेगा। उन्होंने यह भी नहीं कहा कि स्वास्थ्य ठीक हो जानेपर भी जितने दिन तक आर्डिनेंस रहेगा मैं घर नहीं लौटूंगा। इन सब बातोंको देखनेसे मैं यही समझता हूं कि सरकारका उद्देश्य मेरे बिगड़े हुए स्वास्थ्यको सुधारनेको व्यवस्था करना नहीं है।

मिस्टर मोबार्लीने वस्तुतः दो बातें कही हैं, (१) या तो मैं जेलमें बन्दी रहूं (२) या किसी विदेशमें जाकर स्वास्थ्य सुधारूं और अनिश्चित समय तक वहीं रहूं।

किन्तु क्या सचमुच इन दोके बीचका कोई रास्ता बाकी नहीं बचा है ? मेरे मनमें होता है, नहीं है। सरकारकी इच्छा है कि आर्डिनेंसकी अवधि तक यानी १६३० तक, बन्दी रहूं। किन्तु १६३० में जब इसकी अवधि समाप्त होगी, तब इसपर फिरसे विचार नहीं किया जायगा, यह कौन कह सकता है ? पिछले अक्टुबरमें सी० आई० डी० पुलिसके सर्वेसर्वा मिस्टर लोमेनके साथ मेरी जो बातचीत हुई थी, वह बिलकुल आशाजनक नहीं है।

और १६२६ में इस आर्डिनेंसको बाकायदा कानून बनाने-का आन्दोलन हुआ तो मुझे आश्चर्य न होगा। ऐसा होनेपर मुझे स्थायी रूपसे विदेशमें रहना पड़ेगा। और इस तरहके निर्वासनकेलिये मुझे अपने आपको ही उत्तर-दायी मानना होगा। यदि इस सम्बन्धमें सचमुच सर-कारको कोई इच्छा होती कि मैं कब विदेशसे लौटकर आ सकूंगा तो उसका उल्लेख अवश्य होता।

फिर विदेशमें मैं किस हद तक स्वाधीन रहूंगा, इसका भी स्पष्ट उल्लेख नहीं है, स्विटजरलैंडके कोने-कोनेमें जो सी० आई० डी० घूमते हैं भारत सरकार क्या उनसे मेरी रक्षा कर सकेगी? यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि राजनैतिक सन्देहमें अभियुक्त होने पर म जबतक अपना मत बदलकर सरकारी गोयन्दा नहीं हो जाता, तब तक सरकार मुझे सन्देहकी दृष्टिसे ही देखेगी। और यह निश्चय है कि ये सी० आई० डी० पद पदपर मेरा पीछा करके, मेरे जीवनको दुःसह कर देंगे।

स्विट्जरलैण्डमें सिर्फ ब्रिटिश गोयन्दा ही नहीं, बल्कि ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त स्विस, इटालियन, फ्रेंच, जर्मन और भारतीय सी० आई० डी० भी हैं, तथा कोई उत्साही सी० आई० डी० मुझे सरकारकी

नजरोंमें दोषोंकी खान सिद्ध करनेकेलिये, किसी मिथ्या घटनाका वर्णन नहीं भेजेगा, इसका ही क्या प्रमाण है? मैंने पिछले साल मिस्टर लोमेनसे कहा था, कि सी० आई० डी० वाले चाहें तो चाहे जिसके विरुद्ध प्रमाण बनाकर उसे चाहे जिस आर्डिनेंसके अनुसार बन्दी बना सकते हैं। युरोपमें ऐसा करना और भी सहज है। युरोपमें जिन्हें सन्देहकी नजरसे देखा जाता है उन्हें स्वदेश लौटनेकेलिये कितनी असुविधाएं उठानी पड़ती है, यह सब जानते हैं। विलायती पार्लमेन्ट और मन्त्री सभाके कुछ सदस्य प्रयत्न न करते तो लाला लाजपतराय जैसे नेता भी भारत वापिस नहीं आ सकते। सरकारकी सन्देह दृष्टि जब एक वार मेरे ऊपर पड़ गयी है, तो मेरे भविष्यका क्या होगा, इसका सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

मैं जानता हूं, कि पुलिसके गोयन्दा इस विषयमें विशेष तत्पर रहते हैं मैं युरोपमें चाहे जितने शान्त भाव और सावधानीके साथ क्यों न रहूं, वे मेरे खिलाफ़ भारत सरकारके पास झूठी रिपोर्ट भेजेंगे ही। मेरे चुप रहनेपर और कुछ न करनेपर भी वे मुझे भयंकर षड़यन्त्रका कर्ता धर्ता बतलावेंगे, तथा वे क्या रिपोर्ट दे रहे हैं, यह मुझे मालूम भी न होगा। फल-स्वरूप उस रिपोर्टके-

सम्बन्धमें सच बात बतलाने या मेरे कुछ बोलनेकी जगह नहीं रहेगी। इस प्रकार सम्भवतः १९२९ के पहलेही वे मुझे बड़ा भारी बोलसेविक नेता प्रकट कर देंगे, जिसके कारण भारत लौटनेका मेरा रास्ता हमेशाकेलिये लिये बन्द हो जायगा, क्योंकि युरोपवाले सिर्फ बोल-सेविकसे ही डरते हैं। इसलिये मैं अपनी इच्छासे अपनी जन्मभूमिसे निर्वासित होना नहीं चाहता। सरकार भी यदि मेरे दृष्टि कोणसे इसपर विचार करे तो मेरी अवस्था समझ सकती है।

यदि बोलसेविक एजेन्ट होनेकी मेरी इच्छा होती तो सरकारके कहते ही, सबसे पहले मिलनेवाले जहाजसे मैं युरोपकेलिये रवाना हो जाता। तथा स्वास्थ्य ठीक होनेपर बोलसेविक दलमें मिलकर समस्त संसारमें एक विराट् विद्रोहकी सृष्टिकेलिये पेरिससे लेनिन ग्राड तक दौड़ धूप करता। किन्तु मेरी ऐसी इच्छा या आकांक्षा नहीं है। जब मैंने सुना कि मुझे भारत, सिंहल और वर्मा लौटकर नहीं आने दिया जायगा, तब मैंने सोचा कि क्या सचमुच मैं भारतमें ब्रिटिश शासनकी रक्षाकेलिये इतना विपज्जनक हूं। बंगालसे निर्वासित करके भी सरकार सन्तुष्ट नहीं हुई, अथवा सब कुछ धोखेबाजी है? यदि

पहली बात सच है तो ब्यूरोक्रेसीके मुकाबिलेमें मैं भयका कारण बनूं यह मेरे लिये श्लाघाकी बात है। किन्तु इसके बाद ही जब मैं अपने जीवन और कार्य-कलापके बारेमें सोचता हूं तो अनुभव करता हूं एक हिंसा परायन दल मुझे जैसा समझता है,वैसा मैं नहीं हूं। मैंने बंगालके बाहर कोई राजनैतिक कार्य नहीं किया और भविष्यमें करूंगा ऐसा भी मनमें नहीं सोचता, क्योंकि मैं बंगालको ही अपना कार्य-क्षेत्र और अपने आदर्शकेलिये काफी विस्तृत समझता हूं। बंगाल सरकारके सिवा अन्य किसी सरकारके पास मेरे विरुद्ध कोई अभियोग है,ऐसा मैं नहीं समझता। तब क्यों मेरे लिये समस्त भारत, सिंहल, और बर्मामें प्रवेश करना निषेध बताया गया? सिंहल तो बिलकुल ब्रिटिश उपनिवेश है, कानूनन भारत सरकारकी आज्ञा वहां चल सकती है, यह सन्देह जनक है।

बंगाल सरकार इस समय मेरी गति विधि नियन्त्रित करना चाहती है। किन्तु जब मैं स्वाधीन था, तभी मेरी गति विधि क्या थी? अक्टुबर सन् १९२३ से अक्टुबर १९२४ तक सिर्फ दो बार मैं कलकत्तेसे बाहर गया हूं। एक बार खुलना जिला कांफ्रेंसमें, दूसरी बार नदिया जिलेके कौंसिल निर्वाचनमें खड़े हुए एक उम्मी-

द्वारका समर्थन करनेकेलिये। १९२४ के फरवरी माससे अक्टुबर तक मैं एक बार भी बाहर नहीं गया। सिराजगंज कांफ्रेंसके साथ मुझे नत्थी करनेकेलिये काफी कोशिश की गयी, इस समय मैं कारपोरेशनके चीफ इक-जीक्युटिव आफिसरकी हैसियतसे कारपोरेशनके काममें विशेष व्यस्त था,ठीक कांफ्रेंसके समय कारपोरेशनके धांगड़ोकी हड़तालकी संभावनाके कारण एक मिनटकेलिये भी बाहर जाना संभव नहीं था। सन् १९२४ के मेसे अक्टुबर तक मैंने जो कुछ किया उसे सब जानते हैं। उस समय सरकारको मेरी गति विधिका सब हाल मालूम था। मेरी गतिविधिको नियंत्रित करना ही यदि मेरे गिरफ्तार किये जानेका कारण है तो मैं कह सकता हूं कि मुझे गिरफ्तार करनेकी कोई जरूरत नहीं थी।

मिस्टर मोवालीने एक विषयमें हृदय हीनताका परिचय दिया है। सरकार जानती है प्राय २॥ वर्षसे मैं निर्वासित हूं, इस समयमें मैं अपने किसी आत्मीय, यहां तक कि पिता मातासे भी नहीं मिल सका। सरकारने प्रस्ताव किया है कि मुझे २॥-३ वर्ष विदेशमें रहना पड़ेगा, इस समय भी उनके साथ मिलनेकी कोई सुविधा नहीं मिलेगी। यह मेरे लिये कष्ट दायक है इसमें सन्देह नहीं,

किन्तु जो मुझे चाहते हैं उनकेलिये तो यह और भी अधिक कष्टदायक है। पूर्वीय लोग अपने आत्मीयोंके साथ किस प्रकार अटूट स्नेह सूत्रमें बन्धे रहते हैं, इसका पश्चिमीय अनुमान भी नहीं कर सकते। मेरा खयाल है कि इस अज्ञानके कारण ही सरकारने ऐसी हृदय हीनताका परिचय दिया है। वे सोचते हैं जब कि मेरा विवाह नहीं हुआ, तब मेरा परिवार कहांसे हो सकता है और किसीके प्रति मेरा प्रेम भी नहीं हो सकता।

पिछले २॥ वर्षोंसे मुझे कैसे कष्ट भोगने पड़ रहे हैं, सरकार शायद यह भूल गयी। बिना कारण मुझे इतने दिन तक अटका रखा गया है। तब भी मुझसे कहा गया है, अस्त्र-शस्त्र तथा विस्फोटक पदार्थ मंगाने, सरकारी कर्मचारियोंकी हत्या करनेके षड़यन्त्रके अभियोगका मैं अपराधी हूं। इस सम्बन्धमें मुझसे कुछ कहनेकेलिये कहा गय , मेरा कहना है कि मैं निर्दोष हूं। मेरा विश्वास है कि परलोकगत सर एडवर्ड मार्शल और सरजान साइमन इससे अधिक और कुछ नहीं कह सकते थे। दूसरी वार ये अभियोग मेरे सामने रखे गये तब मैंने पूछा था, इतने आदमियोंके रहते हुए पुलिसने मुझे पकड़ा क्यों? मेरा खयाल है यही उत्तर सन्तोष जनक है।

मेरी गिरफ्तारीके बाद बंगाल सरकारने मेरे आश्रितोंके लिये तथा घरकी रक्षाकेलिये किसी तरहका भत्ता नहीं दिया। इसकेलिये मैंने बड़े लाटके पास आवेदन भेजा था पर बंगाल सरकारने उसे दबाकर रख छोड़ा। इसके बाद अब फिर मुझे तीन साल विदेशमें रहनेकेलिये कहा जा रहा है। युरोप रहनेके समय मुझे अपना खर्च स्वयं चलाना होगा। यह प्रस्ताव कैसे युक्ति संगत है यह समझमें नहीं आता। १९२४ में मेरा स्वास्थ्य जितना अच्छा था, कमसे कम वैसाही स्वास्थ्यशाली बनाकर सरकारको मुझे छोड़ना चाहिये। जेलमें रहनेके कारण मेरे स्वास्थ्यकी हानि हुई तो क्या सरकार उसकी क्षति पूर्ति नहीं करेगी? युरोपमें जब तक मैं स्वस्थ न हो जाऊं तब तक सरकारको मेरा सब खर्च देना चहिये। सरकार यदि युरोप जानेके पहले मुझे घर जाने देती, युरोपमें मेरा सब खर्च देती और स्वस्थ होतेही मुझे भारत लौटने देती तो मैं उसके व्यवहारको सहृदयता-पूर्ण समझता।

मिस्टर मोबार्लीने कहा है सरकार और सुभाषचन्द्र बोस; दोनो ही समझते हैं कि आर्डिनेन्सकी अवधि समाप्त होने तक सरकार सुभाषचन्द्र बोसको अटकाकर रख

सकती है। इस विषयमें मैं मिस्टर मोवालींके साथ सह-मत हूं। मैं जानता हूं सरकार जितने दिनतक चाहे मुझे अटका कर रख सकती है। आर्डिनेन्सके खतम होनेपर तीसरे रेगुलेशन या किसी अन्य कानूनसे मुझे बन्दी बना सकती है। व्यवस्थापिकाके सदस्य चाहे जितनी उछल-कूद मचायें या शासन सभाके सदस्य सफर खर्च क्यों न ना मंजूर कर दें, मै जानता हूं, सरकार चाहे तो जीवनभर मुझे बन्दी रख सकती है। सरकार मुझे चिरकालतक बन्दी रखना चाहती है या नहीं, यही मैं जानना चाहता हूं। देशबन्धु मुझे युवक-वृद्ध कहकर पुकारते थे, वे मुझे निराशावादी कहते थे। हां, मैं निराशावादी हो सकता हूं, क्योंकि ज्यादातर मैं प्रत्येक घटनाका अशुभ ही देखता हूं। वर्तमान घटनाका सबसे खराब फल क्या हो सकता है, वह भी मैंने सोचकर देखा है किन्तु तब भी मैंने निश्चय किया है, जन्मभूमिसे हमेशाकेलिये दूर होनेकी अपेक्षा जेलमें मृत्युको वरण करना ही अच्छा है। क्योंकि मैं कविकी इस वाणीमें विश्वास करता हूं।

"गौरवका पथ सिर्फ मृत्युकी ओर ले जाता है।"

सरकारके प्रस्तावके पक्ष और विपक्षमें जो कुछ

कहना है, मैंने वह सब कहा है। मेरे छुटकारेकी संभावना दूर चली गयी इसके लिये कोई दुख न करे। पिता माता-को सबसे अधिक कष्ट होगा, उनको सान्त्वना दीजि-येगा। स्वतंत्रताके पहले व्यक्तिगत और सामूहिक भावसे हमें अनेक कष्ट सहने होंगे। भगवानको धन्य-वाद है कि मैं निर्विकार हूं और हर तरहकी अग्निपरीक्षा-के लिये प्रस्तुत हूं। अपनी जातिके समस्त पापोंका मैं प्रायश्चित्त कर रहा हूं, इसीसे मैं तृप्त हूं। हमारा विचार और आदर्श अमर रहेगा, हमारी स्मृति कभी भी नष्ट न होगी, भविष्य सन्तान हमारी प्रिय कल्पनाकी उत्तरा-धिकारिणी होगी, यही विश्वास कर हर तरहकी विपत्तियों और कष्टोंको सहास्य सहकर जीवन बिता दूंगा। इति

जीवन-लक्ष

(श्री शरच्चन्द्र वसुको लिखे गये पत्रका अनुवाद)

इनसिन जेल ।

६ मई १९२७

बड़े भइया !

लम्बा पत्र लिखनेकी ताकत नहीं है। जबतक पूरी ताकत न आ जाये मुझे उसका इन्तजार करना होगा। सरकारी प्रस्तावके सम्बन्धमे भइयाके साथ मेरी बहुत बातचीत हुई है। मुझे इस तरहकी बातचीतका अवसर मिला इसके लिये मैं अत्यन्त आनन्दित हूं। माननीय स्वराष्ट्र सचिवने जो सौजन्य दिखलाया उसके

लिये उन्हें धन्यवाद है। मेरे साथ अभीतक जो व्यवहार किया जाता था, उससे यह व्यवहार बिलकुल पृथक है।

२७ अप्रैलको भइयाने मुझे सरकारका उत्तर दिखलाया। इस उत्तरसे मूल विषय दोनों पक्षोंके सामने और भी स्पष्टतासे आगया। ११ अप्रैलको सरकारी शर्तोंका मैंने जो उत्तर दिया था, अब मैं फिर सोचकर उसे ही ठीक समझता हूं।

मेरा जो सिद्धान्त है, वह सहज विचारका फल है। अच्छी तरह सोच-विचार करनेसे यह सिद्धांत और भी दृढ़ होता है। जीवनको सहज भावसे विचार कर मैं इस सिद्धान्तपर पहुंचा हूं। अच्छीतरह सोचनेपर यह सिद्धान्त और अधिक दृढ़ हुआ है। जेलमें मेरे जितने ही अधिक दिन बीतते हैं, मेरे मनमें यह धारणा दृढ़ होती है कि, जीवन-संग्रामके मूलमे मतवादका संघर्ष, सत्य या मिथ्याका संघर्ष रहता है। कोई-कोई इसे सत्यके विभिन्न पहलुओंका संघर्ष भी कहते हैं। मनुष्यकी धारणा ही मनुष्यको चलाती है, ये सब धारणाएं निष्क्रिय नहीं हैं, क्रियाशील और संघर्षात्मक हैं। हेगलका Absolute Idea, हेपमेन और शोपेनहार Blind Will और हेनरी "Iean Vital" के मतसे समस्त धारणाएँ ही क्रियाशील

हैं। ये सब धारणाएं खुद ही अपना पथ बना लेती हैं। हम तो मिट्टीके पुतले हैं, भगवानकी तेजराशिके कुछ अणु ही हममें हैं। यही समझकर हमें आत्मोत्सर्ग करना होगा।

सांसारिक और शारीरिक सुख दुखको अग्राह्य कर जो इस भावसे आत्मनिवेदन कर सके उसके जीवनमें सफलता अवश्यम्भावी है। एक दिन मेरे आदर्शकी विजय होगी, इसका मुझे दृढ़ विश्वास है। इसलिये अपने स्वास्थ्य और भविष्यके सम्बन्धमें मैं कुछ चिन्ता नहीं करता।

सरकारी शर्तके जवाबमें मैंने जो कुछ लिखा है उसमें मैंने अपना मत व्यक्त कर दिया है। किसी किसी समलोचकका कहना है कि अच्छी शर्तें पानेकेलिये मैंने चाल चली है। समालोचकोंकी इस प्रकारकी निर्दय समालोचनासे मैं दुःखी हूं। मैंने दूकानदारी या दर मुलाई नहीं की, कूटनीतिसे मुझे घृणा है। मैं एक आदर्श लेकर खड़ा हूं। बस, यहीं सब शेष है! मैं जीवनको इतना प्रिय नहीं समझता कि उसकी रक्षाकेलिये चालाकीका आश्रय लूं। मूल्यके सम्बन्धमें मेरी धारणा बाजारकी धारणासे पृथक है। शारीरिक या वैषयिक सुखकी

कसौटीपर जीवनकी सफलता या व्यर्थताका निर्णय किया जा सकता है, इसे मैं नहीं मानता। हमारा संग्राम शारीरिक बलका नहीं है। वैषयिक लाभ प्राप्तिकेलिये भी हमारी लड़ाई नहीं है। सेण्टपालने कहा है,—

"हम रक्त मांसके विरुद्ध संग्राम नहीं करते, हमारा संग्राम उनके विरुद्ध है; जो पृथ्वीके अन्धकारके नायक हैं, हमारा संग्राम उच्च-पद-प्राप्त अन्यायके विरुद्ध है।" स्वाधीनता और सत्य ही हमारा आदर्श है, रातके बाद जैसे दिन आता है, हमारी कोशिश भी वैसे ही सफल होगी, होगी! हमारा शरीर नष्ट हो सकता है किन्तु अटल विश्वास और दुर्जय संकल्पके बलसे हमारी जय अवश्य होगी। हमारे आदर्शकी सफलता देखनेका सौभाग्य किसे प्राप्त होगा, यह तो भगवान ही जानते हैं। किन्तु अपने सम्बन्धमे मैं कह सकता हूं, मैं अपना काम किये जाऊंगा, फिर चाहे जो भी हो।

और एक बात कहकर वक्तव्य समाप्त करता हूं। मैं स्विटजरलैण्ड जाऊंगा या नहीं यह मैं अभी स्थिर नहीं कर सकता। शरीरकी वर्त्तमान समयमें जो अवस्था है उसे देखते हुए स्विटजरलैण्ड जानेका परिश्रम मैं कर नहीं सकूंगा। फिलहाल भारतके किसी स्वास्थ्यप्रद

स्थानमें रहकर मुझे स्वास्थ्यलाभ करना होगा। कितने दिन बाद स्विटजरलैण्ड जाने लायक शक्ति प्राप्त कर सकूंगा कुछ ठीक नहीं। जो भी हो डाक्टरोंका मत है कि जबतक मैं जरा अच्छा नहीं हो जाता; तबतक स्विटजरलैंड जानेका सवाल ही नहीं उठ सकता। और भारतके किसी स्वास्थ्यप्रद स्थानमें रहकर ही यदि मैं स्वास्थ्यलाभ कर सकूं या इच्छापूर्वक निर्वासन स्वीकार न करूं तो स्विटजरलैण्ड जानेकी जरूरत ही क्या है?

साथ ही साथ स्विटजरलैण्ड जानेका निश्चय करनेके पहले मुझे अपनी आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें सोचना होगा। परिवारवालोंके साथ, विशेषकर माता पिताके साथ इस सम्बन्धमें बातचीत करना होगा। कुछ ही महिनोंमें बंगालकी राजनैतिक अवस्थामें परिवर्तन हो सकता है तथा बंगाल सरकारकी धारणा भी परिवर्तित हो सकती है। किसी तरहका निश्चय करनेके पहले इन सब बातोंपर विचार कर लेना होगा। जो भी हो, मैं किसी तरहकी बन्दिश नहीं चाहता, यदि सरकार किसी तरहकी रोक थाम करना चाहे तो आप लोग बातचीत बन्द कर दें। ईश्वर महान् है—कमसे कम अपनी सृष्टिसे महान् अवश्य है। हम जब उसमें विश्वास करते हैं, तब हमें दुःखी नहीं होना चाहिये।

मेरे प्रति जो अनुरक्त हैं और सहानुभूति पूर्ण हैं, मैं उनकेलिये पीड़ाका कारण हूं, इसके लिये मुझे बड़ा दुःख है। किन्तु यही सोचकर मुझे सांत्वना मिली है कि जो समान रूपसे मातृभूमिके प्रति आस्था सम्पन्न हैं, वे समान रूपसे दुःख सुख भोगनेके अधिकारी हैं। आशा है आप लोग सानन्द होंगे। इति

———

निवेदन

फेलसल लाज
शिलांग
१०-८-२७

श्रद्धापूर्वक निवेदन,

जब मैं उत्तर कलकत्ताके निर्वाचन क्षेत्रसे बंगीय व्यस्थापिका सभाकेलिये उम्मीदवार खड़ा हुआ था, तब मुझे माण्डला जेलसे २४ सितम्बरको आपके पास आवेदन भेजना चाहिये था मगर वह आपके पास नहीं पहुंचा। अधिकारियोंने चाहे जिस कारणसे हो वह पत्र आपके पासतक नहीं पहुंचने दिया। उन्होंने साधारण

आवेदन पत्रको क्यों रोक लिया, यह पूछने पर भी उसका कुछ उत्तर नहीं मिला। इसके बाद अपने निर्वाचनके विषयमें व्यक्ति विशेषको मैंने जो पत्र दिये थे, उनमेंसे भी अधिक अपने लक्ष स्थान तक नहीं पहुंचे। जब मैं जेलमें था तब एक उच्च कर्मचारीसे सुना था कि अधिकारियोंकी इच्छा है कि मैं जेलमें रहकर निर्वाचनका काम न चला सकूं।

किन्तु मुझे विश्वास है कि मेरा लिखित निवेदन आपके पास न पहुंचनेपर भी मेरे आकुल हृदयका मूक निवेदन आपके पास पहुंच गया होगा। इसीलिये मेरा निवेदन न सुननेपर भी और अति प्रबल योग्य प्रतिद्वन्दी होनेपर भी मेरे जैसे अयोग्य आदमीको वोट देकर आपने निर्वाचित किया है। माण्डला जेलमें रातको दस बजे जब मैंने कई राजबन्दियोंके साथ निर्वाचनकी सफलताका समाचार सुना, उस समय प्रकट रूपसे आपके प्रति कृतज्ञता नहीं जना सका। किन्तु मेरा विश्वास है कि नदी, नद, जंगल पारकर मेरे हृदयकी वाणी आपके पासतक पहुंच गयी होगी।

आपके प्रति विशेष कृतज्ञता प्रकट करनेका कारण यह है कि जिस अवस्थामें पड़कर मित्रको उसके मित्र भी पहचान नहीं पाते, ऐसे समयमें, जब कि मैं अधिकारियों

द्वारा लांछित था, उस समय भी आपने अधिकारियोंकी पर्वा न कर मुझे सम्मानके उच्च आसनपर बैठाया। मेरे प्रति ऐसा स्नेह और विश्वास प्रकट कर आपने सिर्फ मुझे ही धन्य नहीं किया बल्कि सभी राजबन्दियोंको गौरवमण्डित किया है।

जेलमें रहते हुए आपके प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करनेका अवसर नही मिला तथा वर्तमान समस्याके सम्बन्धमें आपका मतामत जाननेका सुयोग भी नहीं मिला। सोचा था, जब मुक्ति मिलेगी तभी ये दो कार्य सम्पादन कर सकूंगा। पहले छूटनेकी बिलकुल आशा नही थी, किन्तु जिस दिन अप्रत्याशित भावसे छूटा उस दिन मैं बीमार और शैयाग्रस्त था। आपके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मेरा जो कर्तव्य है उसे जेलसे छूटनेपर भी मैं आजतक नहीं कर सका। इच्छा न रहनेपर भी आपके साथ मुलाकात न करके मुझे यहां आना पड़ा। कर्मक्षेत्रमें आनेमें अभी विलम्ब है, पर पहलेसे अब जरा ठीक हूं,इसलिये निश्चय किया कि कमसेकम पत्र द्वारा अपना निवेदन प्रकट कर दूं।

मेरे छुटकारेके बाद आपने मुझे जिस प्रकार अभिनन्दित किया है एवं मेरी आरोग्य-कामनाकेलिये जो

कुछ किया है, उसे मैं भूल नहीं सकता। आपने मुझे सेवा करनेका अधिकार देकर धन्य किया है, मेरी एकान्त कामना है कि मैं अपने इस अधिकारका समुचित उपयोग कर सकूं। आपने मेरे प्रति स्नेह और विश्वास प्रकट कर मुझे सम्मानित किया है।

पूर्ण रूपसे स्वस्थ होनेमें विलम्ब होनेपर भी आपके आशीर्वाद और शुभ इच्छाके प्रभावसे मैं आरोग्य लाभ कर रहा हूं। किन्तु शारीरिक आरोग्य प्राप्त करनेपर भी मानसिक शान्ति पाना असंभव है। बङ्गालकी इतनी सुयोग्य सन्तानें जबतक बिना अपराध बन्दी हैं, बिना विचारे जेलोंमें पीसी जा रही हैं, बङ्गालके असंख्य नर-नारी जबतक अपने प्रिय जनोंके दुःख कष्ट और लांछनाका खयाल कर असह्य हार्दिक वेदनासे दिन रात छटपटा रहे हैं, बङ्गालके असंख्य घर पिता, पुत्र, पति, भाईके बिना श्मसान तुल्य हो रहें हैं, तबतक कौन बङ्गाली खा-पीकर सुखसे सो सकता है? बंगालके गवर्नरने मुझे सूचित किया है कि इस बार कौंसिलमें उपस्थित न होनेपर भी मेरा नाम सदस्योंकी सूचीसे न काटा जायगा। मेरे मनमें हो रहा है कि कौंसिलकी आगामी बैठकमें जब राजबन्दियोंका प्रश्न उठे तब वहां उपस्थित होकर अपना कर्तव्य पालन

करूं। चिकित्सकोंकी अनुमति मिलेगी या नहीं, नहीं जानता, यदि अनुमति मिल गयी तो कलकत्ता आकर अपना कर्तव्य पालन करूंगा। कौंसिलकी बैठकमे उपस्थित हो सकूंगा इस आशासे प्रस्ताव और कुछ प्रश्न तैयार कर लिये हैं। किन्तु यदि अनुमति न मिली तो जितना जल्द हो सके आरोग्यलाभ कर जन सेवाकेलिये कर्मक्षेत्रमें आ जाऊं, इसकी पूर्ण चेष्टा करूंगा। इस समय चारों तरफ नव जागरणके लक्षण दिखलाई पड़ रहे हैं। राष्ट्रीय जीवन क्षेत्रमे जो बाढ़ आनेवाली उसका आभास मेरे मनको मिल गया है, अब यही चाहता हूं कि ठीक समयपर उसके लिये शरीर और मनसे प्रस्तुत रहूं।

किमधिकम्। मेरी श्रद्धाञ्जलि ग्रहण कीजियेगा। इति—

जेलसे निवेदन

[निम्नोक्त निवेदन पत्र माण्डलेसे भेजा गया था, जिसे अधिकारियोंने अटका रखा था]

यथा योग्य सम्मान पूर्वक निवेदन कि;—

बंगीय व्यवस्थापिका सभाकी सदस्यताके लिये मैं उत्तर कलकत्ता निर्वाचन क्षेत्रसे कांग्रेस द्वारा मनोनीत होकर खड़ा हुआ हूं। जनमत मेरे अनुकूल है यह जानकर, स्वदेश सेवी और शुभकांक्षियोंके उपदेशसे मैं देशकी सेवाका अधिकतर सुयोग पानेकी आशासे सदस्यताकेलिये खड़ा हुआ हूं। किन्तु इसके पहले मुझे, जिस प्रकार आपके सामने उपस्थित होना चाहिये था, उस तरह नहीं हो

सकता। किन्तु आशा करता हूं कि मेरी वर्तमान अवस्था जानकर आप क्षमा कर देंगे।

जेलमें रहते हुए निर्वाचनकेलिये खड़ा होना चाहिये या नहीं और निर्वाचनकेलिये खड़े होनेमें कुछ सार्थकता है या नहीं, इसपर मैंने अच्छी तरह विचार किया है। राष्ट्रीय महासभाने भी इस विषयपर विचार किया है। देशबन्धु चितरञ्जनदास होते तो वे भी मुझे खड़े होनेके लिये कहते, ऐसा मेरा विश्वास है। श्री अनिलवरण राय और सत्येन्द्रचन्द्र मित्र महोदयने पुनर्निवाचनके समय जो कुछ कहा था, उससे मेरे कथनका अनुमोदन होता है। सब बातोंपर अच्छी तरह विचार कर और समझकर कि निर्वाचनकेलिये उम्मीदवार होनेमें सार्थकता है, मैंने आपके सामने पत्र द्वारा उपस्थित होनेका साहस किया है। इस निश्चयपर पहुंचनेमे जनमतका अनुकूल होना एक बहुत बड़ा कारण है, यह कहना ही होगा। अगर सुयोग होता और सम्भव होता तो मैं स्वयं आपकी सेवामें उपस्थित होकर अपने राजनैतिक मतामत व्यक्त करता, तथा आपका उपदेश और परामर्श जानना चाहता। किन्तु सरकार द्वारा मैं इस अधिकारसे वञ्चित कर दिया गया हूं। लगभग दो वर्ष हुए मैं बिना विचार और बिना न्याय

जेलमें बन्द हूं। इन दो वर्षोंमें बहुत अनुरोध करनेपर भी सरकारने मुझे किसी भी अदालतके सामने उपस्थित नहीं किया। यहांतक कि अधिकारियोंके पास मेरे विरुद्ध क्या अभियोग हैं और क्या गवाहियां हैं यह भी मुझे किसी भी तरहसे नहीं बतलाया गया। अपने अपराधके सम्बन्धमें यदि मुझे कुछ कहना पड़े तो मैं यही कह सकता हूं कि पराधीन जातिकी चिर आचरित पद्धतिको छोड़कर कांग्रेसके एक साधारण सेवककी हैसियतसे स्वदेश सेवामें मन प्राण अर्पण करनेका मैंने प्रयास किया है। जिसके फलस्वरूप मैं जेलमे ही बन्द नहीं किया. बल्कि देशसे दूर भेज दिया गया। अपनी मातृभूमिकी मिट्टी और जलसे मुझे वञ्चित कर दिया गया। तब भी मेरे लिये सन्तोषकी यही बात मेरा जेल जाना व्यर्थ नहीं हुआ। आज मेरी सम्पूर्ण व्यथा रञ्जित होकर, गुलाबकी तरह खिल गयी है। यहां आनेके पहले मैं बंगालको, भारतको प्रेम करता था। किन्तु देशसे दूर आनेपर प्यारे बंगालको, प्रिय भारतको हजार गुना अधिक चाहने लगा हूं। बंगालका आकाश, बंगालकी वायु, स्वप्नप्रस्तुत, स्मृति आच्छादित बंगालका मोहन रूप आज मेरे सामने कितना मनोहर, कितना पवित्र, कितना सत्य है, यह मैं कैसे

बतलाऊं ? जिस आन्तरिक आत्मोत्सर्गका आदर्श लेकर मैं कर्म भूमिमें अवतीर्ण हुआ था, निर्वासनकी पारसमणि मुझे प्रतिदिन उसके लिये योग्यतर बना रही है। जो चिरंतन सत्य बंगालकी भागीरथी और बंगालके शस्यश्यामल क्षेत्रोंमे मूर्त हुआ है, बंगालके जिस धर्मको बंकिमसे लेकर देशबन्धुतकने साधना द्वारा उपलब्ध किया था, तथा जिसका साहित्य द्वारा प्रकटीकरण किया था, बंगालका जो भुवनमोहन रूप कितने शिल्पियों, कलाकारों, कवियों और साहित्यिकोंकी तूलिका और लेखनीका विषय है, आज उसका आभास पाकर मैं कृतकृत्य हूं। देशकी इसी अनुभूतिके पुण्य प्रतापसे जेल-जीवनके ये दो वर्ष सार्थक हुए हैं। मैं समझ सका हूं कि माकेलिये इस प्रकार दुख, कष्टका वरण करना कितने गौरव और सौभाग्यकी बात है।

इस प्रकारके आवेदनमें अपना परिचय देनेकी विधि बहुत दिनसे चली आ रही है किन्तु मेरे पास ऐसा कुछ नहीं है जिसका परिचय देकर मैं आपकी सहायता पानेका दावा कर सकूं। पांच वर्ष पहले जब उत्ताल महोदधिकी तरंगोंकी तरह भारतके प्राण भारतमाताके चरणों मे उत्सर्ग होनेके लिये उतावले हो रहे थे, उस समय विश्वविद्यालयसे निकलकर मैं कर्मक्षेत्रमें आया था।

अपने जीवनको पूर्ण रूपसे विकसित कर माताके चरणोंमें अंजलि चढ़ा दूंगा और इसी आन्तरिक उत्सर्ग द्वारा जीवनकी पूर्णता प्राप्त करूंगा, इसी आदर्शसे मैं अनुप्राणित हुआ था। समाज सेवा और राजनीतिका काम मैंने सामयिक रूपसे ग्रहण नहीं किया था। इसीलिये पराधीन देशके जीवनमें जो विपत और परीक्षा, दुःख और वेदना अवश्यम्भावी है; उसके लिये शरीर और मनसे प्रस्तुत होनेकेलिये हमेशा चेष्टा करता था। इस कोशिशमें मैं सफल हुआ या नहीं,अथवा किस हद्तक सफल हुआ उसका विचार मेरे देशवासी करेंगे। मेरे इस क्षुद्र किन्तु घटनापूर्ण जीवनके ऊपरसे जो जो तूफान गुजरे हैं, उन्हीं विघ्न और विपत्तियों द्वारा मैंने अपने आपको समझने और पहचाननेकी चेष्टा की है। यौवनके प्रभातमें मैंने जिस कंटकमय पथका अवलम्बन किया, निश्चय ही उसी पथपर अन्ततक चल सकूंगा, अज्ञात भविष्यको सामने रखकर जिस व्रतको मेने ग्रहण किया था, उसका उद्यापन किये बिना विरत नहीं होऊंगा। अपने प्राणों और ज्ञानको निचोड़कर मैंने यही सत्य प्राप्त किया है कि पराधीन जातिका सब कुछ, शिक्षा-दीक्षा, कर्म, सब व्यर्थ है, यदि वह स्वाधीनता प्राप्तिमे सहायक और उसके अनुकूल नहीं

होता। इसीलिये आज मेरे हृदयके अन्तरतम प्रदेशसे निकलकर यह वाणी हमेशा मेरे कानोंमें प्रतिध्वनित होती रहती है, "स्वाधीनता हीनताय के बांचिते चाय रे, के बांचिते चाय।" मैं हाथ जोड़कर आपसे यह प्रार्थना करता हूं, आप लोग मुझे आशीर्वाद दें कि स्वराज्य लाभकी पुण्य प्रचेष्टा ही मेरा जप, तप, स्वाध्याय, साधन और मुक्तिका सोपान हो तथा जीवनके अन्तिम क्षणतक मैं भारतीय मुक्ति संग्राममें लगा रहूं।

आत्मोत्सर्गके पवित्र और मूर्तिमान विग्रह प्रातः स्मरणीय देशबन्धुके चरणोंमे मैंने देश सेवाकी दीक्षा, शिक्षा ली है। उनके रहते हुए, सब विपत्तियोंको तुच्छ मानकर, उनकी पताका लेकर चलता रहा हूं। उनकेन रहनेपर उनके लोकोत्तर चरित्रसे शिक्षा लेकर उसे हृदयमें धारण कर तथा उनके महिमामय जीवनके आदर्शको सामने रखकर एकनिष्ट भावसे जीवन पथपर अग्रसर होऊंगा, यही संकल्प मनमें कर रखा है। सर्व मंगलमय भगवान मेरी रक्षा करें।

इस समय जो निर्वाचन समस्या है, उसका हल आपके ही ऊपर है। क्योंकि इस निर्वाचन संग्राममें एक प्रवासी राजवन्दी पहाड़, नदी, समुद्र पार रहकर, इतनी दूरसे

क्या कर सकता है ? देशका अकिंचन सेवक होनेपर भी आपकेलिये तो मैं बिलकुल अपरिचित नहीं हूं। सबके साथ प्रत्यक्ष परिचय न होनेपर भी क्या आपके ऊपर मेरा कोई दावा नहीं है ? मैं प्रार्थना करता हूं, मेरी जयका अर्थ है, राष्ट्रीय महासभाकी जय, जनमतकी जय, आपकी जय है। इस व्ययसाध्य निर्वाचन संग्राममें आप ही मेरी आशा, भरोसा, सहारा सब कुछ हैं। आपकी सेवा कर कृतार्थ बनूं यही मेरी आकांक्षा है। मुझे विश्वास है कि आप मुझे सेवाका सुयोग और अधिकार देकर धन्य करेंगे और मैं क्या कहूं ? आप ही देशके मूर्तस्वरूप हैं। वतनसे दूर, समुद्र पार निर्वासित बन्दीका श्रद्धापूर्वक अभिवादन स्वीकार कीजिये। इति

देशबन्धु

(श्री शरच्चन्द्र चट्टोपाध्यायको लिखा गया पत्र)

माण्डला जेल

१२-८-२५

श्रद्धास्पदेषु ।

मासिक वसुमतीमे आप द्वारा लिखित "स्मृति कथा" तीन बार पढ़ी, बहुत अच्छी लगी। मनुष्य चरित्र देखनेकी अन्तर्दृष्टि आपको प्राप्त है, देशबन्धुके साथ घनिष्ट सम्पर्क और आत्मीयता होनेके कारण छोटी छोटी घटनाओंकी जानकारीमेंसे उनका विश्लेषण कर रस और

सत्यका आविष्कार करनेकी क्षमता आपमें ही है। साधा-रण उपकरणके द्वारा भी आप इतनी सुन्दर चीज लिख सके हैं!

जो उनके अन्तरङ्ग थे, उनके हृदयमें एक गोपन कथा रह गयी। उन गोपन कथाओंमें कुछका उल्लेखकर आपने सिर्फ सत्यकी ही प्रतिष्ठा नहीं की है, बल्कि आपने हमारे मनका भार भी हलका कर दिया। सचमुच, "परा-धीन देशकेलिये सबसे बड़ा अभिशाप यही है कि विदे-शियोंकी अपेक्षा अपने देशवासियोंके साथ ही अधिक लड़ाई करनी पड़ती है।" इस उक्तिमें जो निष्ठुर सत्य है, उसे राष्ट्र सेवियोंने अच्छी तरह अनुभव किया है और अब भी कर रहे हैं।

आपके लेखमें मुझे यह बात सबसे अच्छी लगी कि "अत्यन्त प्रिय, बिलकुल अपने आत्मीयकेलिये हृदयमें जैसी आग लग जाती है, यह वैसी ही आग है। आज हम लोग जो उनके आस पास थे, उनकी ऐसी हालत ही रही है कि हमारे पास अपना मार्मिक दुख प्रकट करने लायक भाषा भी नहीं है और दूसरेके सामने यह दुखड़ा रोना अच्छा भी नहीं लगता"। सचमुच हृदयकी गूढ़ बात क्या दूसरेसे आसानीसे कही जा सकती है? हां, वे

उपहास करें तो उसे सहा जा सकता है। किन्तु यदि वे दुखका मर्म न समझें तो कितना भीषण कष्ट होता है, तब मनमें यही होता है, "अरसिकेषु रस निवेदनम् शिरसि मा लिख।" हमारे हृदयकी बात अन्तरंग मित्रके सिवा कौन समझ सकता है?

आपने और एक बात लिखी है, जो मुझे बहुत अच्छी लगी कि "हम देशबन्धुका काम करते थे।" मैं ऐसे आदमियोंको जानता हूं जो देशबन्धुके मतमें विश्वास नहीं करते थे किन्तु उनके हृदयमें जो मोहिनी शक्ति थी, उससे मोहित होकर उनकेलिये काम किये बिना नहीं रहते थे। और वे भी मतामतसे रहित होकर सबको प्रेम करते थे। वे कभी-भी समाजके वर्तमान विधि निषेध या परिपाटीसे मनुष्यके चरित्रको नहीं देखते थे। मनुष्यकी अच्छाई,बुराई जानकर भी उसे प्यार करना चाहिये, यह उनका विश्वास था।

अनेक सोचते होंगे कि हम लोग अन्धेकी तरह उनका अनुसरण करते थे, किन्तु उनके प्रधान शिष्योंके साथ उनका सबसे अधिक झगड़ा होता था। अपने सम्बन्धमें मैं कह सकता हूं, असंख्य विषयोंमें मेरा उनके साथ झगड़ा हुआ है। किन्तु मैं जानता था कि चाहे जितना

झगड़ू, मेरी भक्ति और निष्ठा अटूट रहेगी। तथा उनके प्रेमसे मैं कभी वंचित न हो सकूंगा। वे विश्वास करते थे कि चाहे जैसा तूफान क्यों न आये वे मुझे चरणोंके पास ही पायगें। मा (वासन्तीदेवी) हमारे सब तरहके झगड़े निपटातीं। किन्तु हाय ! मचलने, बिगड़ने, रूठनेका आधार भी चला गया। आपने एक स्थानपर लिखा है, "आदमी नहीं, संगी साथी नहीं, धन नहीं, हाथमें एक अखबार भी नहीं, जो अत्यन्त छोटे हैं, वे भी बिना गाली गलौजके बात नहीं करते। देशबन्धुकी यह क्या हालत हैं ?" ओह ! उस दिनका चित्र अभी भी मेरे स्मृति पटपर उसी तरह अंकित है। हम लोग गया कांग्रेसके बाद जब कलकत्ता लौटे, उस समय झूठी और अर्द्ध-सत्य बातोंसे बंगालके समाचार पत्र रंगे हुए थे। यहां तक कि अखबारवाले हमारा वक्तव्य भी छापना नहीं चाहते थे उस समय धनकी आवश्यकता थी और उसका ठिकाना नहीं था, जिस मकानमें भीड़के मारे जगह नहीं रहती थी, उसी मकानमें शत्रु या मित्र कोई आकर झांकता तक नहीं था। सिर्फ हम लोग कुछ आदमी बैठकर, आपसमें बात चीत करते। फिर जब उसी मकानका पूर्ण गौरव फिर आया तब बात ही और थी ? बाहरके आदमियोंने

और पद प्रर्थियोंने आकर जब सभा स्थलपर अधिकार जमा लिया, उस समय हमें, वोलनेका अवसर भी नहीं मिला। कितने परिश्रमसे, हड्डी तोड़ परिश्रमकर भण्डारमें धन संचय किया, फिर किस तरह अपना अखबार निकला, किस तरह जनमतको अपने अनुकूल वनाया, यह वाहरके आदमियोंको नहीं मालूम। शायद कभी मालूम भी न होगा। किन्तु इस यज्ञके जो होता, ऋत्विक्, प्रधान पुरोहित थे वे पूर्णाहुतिके पहलेही कहां, चले गये? भीतरकी आग और वाहरकी आग, इन दोनों ज्वालाओंको उनका पार्थिव शरीर सह न सका।

अनेक सोचते हैं उनके जीवनका उद्देश्य था, स्वदेश सेवाकेलिये मा के चरणोंमें जीवन उत्सर्ग करना। किन्तु मैं जानता हूं उनका उद्देश्य इससे भी महान् था। और वे इसमें बहुत कुछ सफल भी हुए थे। १६२७ की धर पकड़में उन्होंने निश्चय किया था कि एक एक करके अपने परिवारके प्रत्येक व्यक्तिको जेल भेज देंगे, फिर खुद भी चले जायेंगे। अपने लड़केको जेल भेजे विना वे दूसरेके लड़केको जेल नहीं भेज सकते थे। हम जानते थे वे शीघ्रही गिरफतार कर लिये जायगें। उनकी गिरफतारीके पहले उनके पुत्रके जेल जानेकी कोई आवश्यकता

नहीं, तथा एक मर्दके रहते हुए हम किसी महिलाको नहीं जाने देंगे, यह हमारा कहना था। इस पर काफी देर तक बहस हुई, किन्तु किसी तरहका निश्चय न हो सका, हम लोग किसी भी तरह उनकी बात माननेको तैयार नहीं थे। अन्तमें उन्होंने कहा, "यह मेरी आज्ञा है, पालन करना होगा।" अपना प्रतिवाद प्रकटकर हमने आज्ञा शिरोधार्य की।

उनकी बड़ी लड़की विवाहिता थी, उसके ऊपर उनका कोई जोर या अधिकार नहीं था, उसे वे जेल नहीं भेज सके। दूसरी कन्या वाग्दत्ता थी, उसे जेल भेजा जाय या नहीं,इसपर बहस छिड़ी, वे उसे भी भेजना चाहते थे, कन्या भी जेल जानेकेलिये अत्यन्त उत्सुक थी किन्तु बाकी सब उसके जेल भेज जानेके विरुद्ध थे, क्योंकि एक तो उसका शरीर ठीक नहीं था, दूसरे उसका विवाह भी शीघ्र ही होने वाला था। आखिर उन्हें यह बात माननी ही पड़ी। बाकी सबका जेल जाना तय ही था।

बाहरकी घटना तो सब जानते हैं; किन्तु इस घटना-के मूलमें दुनियाकी नजरोंसे पीछे जो भाव, जो आदर्श, जो प्रेरणा निहित है, उसका पता किसको है?

मेरा विश्वास है कि महापुरुषोंका महत्व बड़ी बड़ी घटनाओंकी बनिस्बत छोटी-छोटी घटनाओंसे विशेष प्रकट होता है। आषाढ़ और श्रावणकी वसुमतिमें मैंने देश-बन्धुके सहकर्मियोंके लेख ध्यानसे पढ़े। अनेक लेख वाल्नू-शब्द तथा पुनरुक्तिसे परिपूर्ण हैं, सिर्फ आपने ही छोटी-छोटी घटनाओंका विश्लेषण कर देशबन्धुका चरित्र अंकित करनेकी चेष्टा की है। इसीलिये आपका लेख पढ़कर कितना सुखी हुआ, कह नहीं सकता। देशबन्धु-के शिष्य और सहकर्मियोंसे इससे अधिककी आशा करता था किन्तु अच्छा होता यदि वे कुछ न लिखते। बीच बीचमें बिना यह सोचे नहीं रह सकता कि देशबन्धु-की अकाल मृत्युकेलिये उनके देशवासी और सहकर्मी भी जिम्मेदार हैं। यदि वे उनके बोझको कुछ हलका कर देते तो उन्हें इतना अधिक परिश्रम करके आयु क्षीण न करना पड़ता। किन्तु हमारा ऐसा अभ्यास हो गया है कि एक बार जिसको नेता मान लेते हैं, उसके ऊपर इतना भार लाद देते हैं, उनसे इतनी अधिक आशा करते हैं कि किसी भी आदमीकेलिये उतना भार वहन करना और आशापूर्ण करना संभव नहीं होता। राज-नीति सम्बन्धी सब तरहका दायित्व नेतापर लादकर हम निश्चिन्त होकर बैठना चाहते हैं।

जाने दीजिये, क्या कहते कहते, क्या कहने लगा। मेरी, मेरीही क्यों, यहां जितने हैं सबकी इच्छा है कि आप "स्मृति कथा" की तरह देशबन्धुके सम्बन्धमें और भी कुछ लिखिये। आपका भण्डार इतना जल्द रिक्त नहीं होगा, इसलिये लिखनेका उपादान नहीं मिलेगा, ऐसी आशंका नहीं है। आप यदि लिखेंगे तो वर्मामें बैठे हुए कई बंगाली राजवन्दी उसे साग्रह पढ़ेंगे।

संभवतः मैं अधिक समय तक यहां नहीं रहूंगा किन्तु अब छूटनेकी विशेष इच्छा नहीं है। बाहर होते ही श्मशानकी-सी शून्यता मुझे घेर लेगी, इसकी, कल्पना करते ही हृदय संकुचित हो जाता है। यहांपर सुख, दुख, स्मृति, स्वप्नमें किसी तरह दिन कट रहे हैं। जेलमें बन्द रहकर जो ज्वाला अनुभव कर रहा हूं उस ज्वालामें कुछ भी सुख नहीं है, यह नहीं कह सकता। जिसको चाहता हूं, उसको हृदयसे चाहनेके कारण ही मैं आज उस ज्वालाके भीतर भी शांति पा रहा हूं। जेलकी दीवारसे टकराकर क्षतविक्षत हृदयको भी जो शान्ति मिल जाती है, उसे छोड़कर बाहरकी हताशा, शून्यता और दायित्व लेनेकेलिये मानो मन तैयार नहीं होता।

यहां आये बिना मानो मैं समझ नहीं पाता कि

बंगालको कितना चाहता हूं, शायद रवि बाबूने जेलमें कल्पना कर लिखा था कि,—

सोनार बांगला आमि तोमाय भालो बासि
चिर दिन तोमार आकाश तोमार बातास
आमार प्राणे बाजाय बांसी।"

जब क्षणभरकेलिये भी बंगालका विचित्र रूप मानस चक्षुओंके सामने आ जाता है, तब मनमें होता है, अनुभूतिके लिये, इतना कष्ट सहकर माण्डला आना सार्थक हुआ। पहले कौन जानता था बंगालकी मिट्टी, बंगालका आकाश,बगालकी वायु अपने भीतर इतना माधुर्य भरे हुए है।

क्यों यह पत्र लिख डाला मालूम नहीं। आपको पत्र लिखूंगा यह बात पहले कभी सोची भी नहीं थी। पर आपका लेख पढ़कर जो बाते मनमें आयीं उन्हें लिख डाला। और जब लिख डाला है, तब भेज देना ही ठीक है। हम सबका प्रणाम ग्रहण करें। इच्छा हो पत्रका उत्तर दीजियेगा। किन्तु उत्तर पानेकेलिये जोर देनेका अधिकारी नहीं हूं, शायद उत्तर दें, इसी आशासे ठिकाना दे रहा हूं।

C/o D. I. G. I. B. C. I. D.
13. Elysium Row, Calcutta.

. . . .

[देशबन्धुके जीवन चरित्र लेखक श्री हेमेन्द्रनाथदास गुप्तको लिखा हुआ पत्र।]

माण्डला जेल

२०-१-२६

सर्वसाधारणके पढ़ने लायक देशबन्धु चितरंजनदासके सम्बन्धमें कुछ लिखनेका साहस अभी भी मेरे अन्दर नहीं है। कभी होगा या नहीं, मालूम नहीं। व्यक्तिगत रूपसे मेरे साथ उनका सम्बन्ध इतना घनिष्ट था कि अन्तरंगके सिवा उनके सम्बन्धमें और किसीसे कुछ कहनेकी इच्छा नहीं होती। वे इतने बड़े थे और मैं इतना क्षुद्र हूं कि मुझे भय होता है कि उनकी प्रतिभा कितनी सर्वतोमुखी, हृदय कितना उदार, चरित्र कितना महान था, उसे आज भी हृदयंगम नहीं कर सका हूं। ऐसी हालतमें क्षुद्र हृदय, क्षीण विचार शक्ति और दीन भाषाकी सहायतासे उन प्रातःस्मरणीयके सम्बन्धमें कुछ लिखना धृष्टता होगी। तब भी इच्छा और सामग्री न रहने पर भी मित्रके अनुरोधसे अनेक काम करने पड़ते हैं। इसीलिये प्रिय मित्र हेमेन्द्रनाथके अनुरोधसे यह प्रयास कर रहा हूं। देशबन्धुके सम्बन्धमें मैं प्रत्यक्ष रूपसे जितना जानता हूं और

गम्भीर विवेचनके बाद उनके जीवन और कर्ममय जीवन-का गूढ़ अर्थ जहांतक समझ सका हूं, वह लिखने पर एक पुस्तक तैयार हो जायगी। इतनी बातें लिखनेकी शक्ति और मनकी अनुकूल अवस्था इस समय नहीं है। इसलिये मित्रके अनुरोधकी रक्षाकेलिये मैं कुछ बातें ही लिखूंगा।

देशबन्धुके वैचित्र्यपूर्ण जीवनकी सब बातोंसे मैं परि-चित नहीं हूं। जीवन चरित्रमें जो बातें अबतक छपी हैं, वे भी सम्भवतः मुझे मालूम नहीं। मैं सिर्फ तीन वर्षतक उनके पास था। इस समयमें भी कोशिश करनेपर बहुत कुछ सीख सकता था किन्तु आंखें रहते हुए क्या हम उनका मूल्य समझते हैं? खासकर देशबन्धुके सम्बन्धमें मेरी धारणा थी कि वे और भी कुछ साल रहेंगे और अपने व्रतका उद्यापन न होने तक कर्मभूमिसे अवसर ग्रहण न करेंगे। मुझे जहांतक खयाल है उन्होंने बहुत बार कहा था कि उनके भाग्यमें दो सालतक समुद्र पार जेलमें रहना लिखा है। जेलके बाद वे फिर ससम्मान लौटेंगे, अधिकारियोंके साथ समझौता होगा और वे राजसम्मान पायेंगे, इसके बाद उनकी मृत्यु होगी। उस समय मैंने कहा था कि आपके साथ समुद्र पार चलनेकेलिये मैं भी

तैयार हूं। यहां आनेपर बराबर मेरे मनमें शंका होती कि कहीं उनकी बात ठीक न निकले, वे भी कहीं यहां न भेज दिये जायं? किन्तु हाय इससे भी बढ़कर भयंकर वज्रपात हुआ। हा! भारतका भाग्य!

देशबन्धुके साथ मेरी आखिरी मुलाकात अलीपुर जेलमें हुई थी। आरोग्य लाभ और विश्रामकेलिये वे शिमला गये थे, मेरी गिरफ्तारीकी बात सुनकर वे फौरन शिमलासे कलकत्ते आये थे, मुझे देखनेकेलिये वे अलीपुर मे दो बार आये थे, बहरमपुरको बदली होनेके पहले उनसे अन्तिम साक्षात् हुआ था। आवश्यक बाते होनेपर मैंने उनकी चरणधूलि लेकर कहा, शायद आपके साथ बहुत दिनोंतक मुलाकात न हो। उन्होंने अपने स्वाभाविक उत्साह और प्रफुल्लताके साथ कहा, "नहीं! मैं तुम्हें शीघ्र ही छुड़वा लूंगा।" हाय! किसे मालूम था कि अब इस जीवनमें उनके दर्शन नहीं होंगे। उस मुलाकातका प्रत्येक दृश्य, प्रत्येक बात, चित्रकी तरह मेरे मानस पटलपर अंकित है, आशा है जीवन भर अंकित रहेगी। उनकी वह शेष स्मृति ही मेरे जीवनका सम्बल है।

जनतापर देशबन्धुके अद्भुत प्रभावका क्या कारण है? बहुतोंने इस प्रश्नका उत्तर देनेका प्रयत्न किया है। मैं

अनुचरकी हैसियतसे उसके कारणका निर्देश करना चाहता हूं। मैंने देखा कि वे मनुष्यके गुण दोषोंकी तरफ दृष्टि न देकर उसे प्यार कर सकते थे। वे हृदयके सहज भावसे ही मनुष्य मात्रको स्नेह करते थे, उनका यह स्वाभाविक स्नेह किसी व्यक्तिके गुणावगुणकी अपेक्षा नहीं करता था। जिनको हम घृणासे दूर कर देते हैं, उन्हें वे हृदयसे लगा सकते थे। न जाने कितने तरहके आदमी उनके पास आते थे और न जाने किन किन क्षेत्रों-में उनका अपार प्रभाव था। उन्होंने चारों तरफसे जन-समाजको आकर्षित किया था और उनका पक्ष समर्थन कर उन्हें विजयी बनाया था। जो उनके अगाध पाण्डित्य-के सामने नतमस्तक नहीं होते थे, असाधारण वाग्मितासे वशीभूत नहीं होते थे, अद्भुत भाग्यसे चकित न होते थे, वे भी उनके महान् हृदय द्वारा आकृष्ट होते थे। तथा उनके जो साथी थे, वे मानों उनके परिवारके ही आदमी थे। वे उनके उपकार और मङ्गलकेलिये सब कुछ करते थे। जीवन दिये बिना जीवन नहीं मिल सकता यह बिल-कुल सत्य है। उनके सहकर्मी उनके इशारेपर क्या नहीं कर सकते थे। किसी भी तरहका त्याग, कष्ट, परिश्रम उन्हें विचलित न कर पाता। उनके इशारेपर सहकर्मी

सर्वस्व बलिदान करनेकेलिये तैयार रहते थे। देशबन्धु जानते थे कि अहिंसा संग्राममें अनेक ऐसे अनुचर हैं जिनका हर अवस्थामें विश्वास किया जा सकता है। मैं गर्वके साथ कहता हूं कि अन्तिम समय तक उनके अनुयायियोंने उनके कहनेके अनुसार हर तरहकी विपत्तियां और कष्ट सहर्ष सहे।

दुःखका विषय है कि देशबन्धुके सुसंयत, कर्तव्यपरायण निर्भीक अनुचरोंको देखकर अनेक तथाकथित नेता इर्ष्या करते, शायद वे मन ही मन ऐसे सहकर्मी पानेकेलिये लालायित होते। किन्तु ऐसे कर्मियोंका मूल्य चुकानेकेलिये वे प्रस्तुत नहीं थे, कमसे कम मेरा तो यही विचार है। सहकर्मी या अनुचरसे हार्दिक स्नेह किये बिना बदलेमें उसका हृदय नहीं पाया जा सकता। अन्य लोगोंकी तरह उनके अन्दर अपने और परायेका भेदभाव नहीं था। उनका मकान सबके लिये खुला था, यहां तक कि उनके शयन कक्षमें कोई भी जा सकता था। वे अपने अनुचर वृन्दको प्रेम ही नहीं करते थे बल्कि उनकेलिये लांछना सहनेकेलिये भी तैयार थे। एक दिन उनके किसी कुटुम्बीने एक सहकर्मीके किसी कार्यकी निन्दा कर कहा कि "I hate him" उन्होंने अत्यन्त व्य-

थित होकर कहा कि यही तो मुश्किल है कि मैं घृणा नहीं कर सकता। यही नहीं बल्कि वे बाहरके आदमियों-से अपने आदमियोंके लिये झगड़ा भी किया करते थे। मैंने कई बार देखा है कि वे अपने साथियोंका जोरदार समर्थन करते थे और उनकी निन्दाका जोरदार प्रतिवाद करते थे।

जो भीतरी बात नहीं जानते वे देशबन्धुकी संगठन-शक्ति देखकर विमोहित थे, मोहित होनेकी बात भी है। देशबन्धुने जो कुछ कर दिखाया वह भारतकी राजनीति-में अभूतपूर्व है। मैं निःसंकोच कह सकता हूं कि उन्होंने पर्वतके समान दृढ़ संगठन किया था, उसके मूलमें अनु-चर और नायकके प्राणोंका संयोग था। इसके सिवा दोष गुणकी तरफ ध्यान न देकर मनुष्यमात्रको स्नेह करनेके भाव और असाधारण बुद्धिकौशल द्वारा वे भिन्न-भिन्न रुचि और भिन्न-भिन्न पथके लोगोंको एक साथ चला सकते थे। जो उनके दलमें नहीं थे या उनके मतका समर्थन नहीं करते थे, वे भी गुपचुप उनकी सहा-यता करते थे।

अनेक तथाकथित नेताओंने कहा है कि देशबन्धुके अनुचर और सहकर्मी दासत्वपरायण थे। देशबन्धुके

मंत्रणागृहमें जो उपस्थित थे, वे इस बातका समर्थन नहीं करेंगे। आलोचना और परामर्शके समय जो निर्भीक और स्पष्टवादी थे उनको मैं दासत्वपरायण कैसे कह सकता हूं? यहांतक कि आलोचनाके समय नायक और अनुचर वर्गमें तुमुल विवाद छिड़ जाता, किन्तु वे कभी भी इस तरहके विवादसे मनमें भी नाराज नहीं होते। अनेक तो यही कहते हैं कि जो ज्यादा तर्कवितर्क करते, वे उन्हींकी बातें ज्यादा सुनते। यह बात सच है कि मतभेद होनेपर भी उनके अनुयायी उच्छृङ्खल या असंयत नहीं होते। अथवा नेतापर नाराज हो उसकी निन्दा कर विपक्षमें नहीं मिल जाते। देशबन्धुके संघका प्रधान नियम था संयम और श्रृंखला। आपसमें मतभेद होनेपर भी बहुमत द्वारा जो निर्णय हो जाता उसे ही सब मानते। संघके नियमोंको मानकर चलनेकी शिक्षा इस भारतमें नवीन नहीं है। २५ सौ वर्ष पहले भगवान बुद्धने भी भारतको यही शिक्षा दी थी। आजतक पृथ्वी-भरमे सब जगह बौद्ध प्रार्थनाके समय कहते हैं—

बुद्धं शरणम् गच्छामि
धर्मं शरणम् गच्छामि
संघं शरणम् गच्छामि

सचमुच क्या धर्मप्रचार, क्या स्वदेश सेवा संघ और संघानुवर्तिताके बिना कोई भी महान् काम दुनियामें संभव नहीं है।

और भी एक शिकायत मैंने सुनी है कि राजनीतिके आवर्तमें पड़कर देशबन्धु शिक्षा-दीक्षामें निम्न आदमियों-के साथ भी मिलते जुलते थे। सन् १९२१ से जीवनके अन्तिम समय तक वे जिन सहकर्मियोंके साहचर्यमें आये थे, उन्हें निम्नस्तरका समझते थे या नहीं, मैं नहीं जानता। किन्तु उनकी बातचीतसे कभी इस तरहका भाव प्रकट नहीं हुआ। मुमकिन है कि वे अपने मनका भाव छिपा लेते हों। एक घटना मुझे याद है, जेलसे छूटनेपर छात्रोंने उनके अभिनन्दनकेलिये एक आयोजन किया था, सभामें उन्हें जो अभिनन्दन दिया गया था, उसमें उनके त्याग और देशसेवाका उल्लेख था। युवकोंकी भक्ति और प्रेमका अर्घ्य पाकर उनका हृदय उद्वेलित हो गया। वे चिरनवीन और चिरयुवा थे, इसीलिये युवककी वाणी उनके हृदयपर फौरन आघात करती थी। वे जिस समय अभिनन्दनपत्रका उत्तर देने उठे उस समय उनके हृदयमें भावोंका तूफान उठ रहा था। अपने त्याग और कष्ट-की बात भूलकर वे युवकोंके कष्ट और त्यागकी बात कहने

लगे परन्तु अधिक कह न सके, उनका गला रुँध गया। चुपचाप खड़े रहे, आंसुओंकी धाराएं झरझर बहने लगीं। तरुणोंका राजा रोने लगा, तरुण भी रोने लगे।

जिनकेलिये उनके मनमें इतनी समवेदना, इतना प्रेम था, उनको निम्नस्तरका वे कैसे समझ सकते थे, इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती।

निश्चयही जिन्होंने देशबन्धुका काम किया है तथा अब भी कर रहे हैं, उनके भीतर शिक्षा, दीक्षा या आभि जात्यका गर्व नहीं है। आशा है विनय रूपी परम सम्पदासे वे कभी भी रहित नहीं होंगे।

देशबन्धुका अन्तिम पत्र मुझे पटनासे मिला था। वह पत्र सुदूर वर्मामें बैठे हुए मेरे जैसे राजबन्दीकेलिये अमूल्य स्मृति निधि है। इस पत्रमें यह स्पष्ट मालूम होता है कि अपने सहचर या अनुयायीके पृथक् हो जाने-पर उसकेलिये उनका हृदय किस प्रकार तडपा करता था। वह तडप कितनी तीव्र होती थी इसे वे ही समझ सकते हैं, जो देशबन्धुके हृदयको पहचानते हैं।

सन् १९२१ और १९२२ में आठ महीने तक देशबन्धु-के साथ जेलमें रहनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। इन आठ महिनोंमें हम दो महिने तक अगल बगलकी दो

शेलोंमें रहा करते थे। तथा दो महिने तक अन्य कई वन्धुओंके साथ सेन्ट्रल जेलके एक वड़े हालमें थे। इस समय उनकी सेवाका कुछ भार मेरे ऊपर था। सरकारीकी कृपासे आठ महिने तक मैंने उनकी सेवा करनेका सुयोग पाया था। यह मेरे लिये अत्यन्त गौरवकी बात है, सन् १६२१ में गिरफ्तार होनेके पहले मैंने सिर्फ तील चार महिने उनके अधीन काम किया था। इसलिये तीन चार मासके कम समयमें उनको अच्छी तरह पहचनना मेरे लिये सम्भव नहीं था। पर जब आठ महीने तक सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, तव मैं उन्हें पहचान सका। अंग्रेजीमें कहा जाता हैं कि "Familiarity breeds contempt" यानी विशेप घनिष्ठता होनेसे अश्रद्धा उत्पन्न होती है। किन्तु देशबन्धुके सम्बन्धमें कह सकता हूं कि उनके साथ घनिष्टता होनेपर उनके प्रति मेरी श्रद्धा सौ गुनी वढ़ गयी। उमीद् है इस वातका सभी समर्थन करेंगे।

देशबन्धु अविरल रसिकताके अपूर्व भण्डार थे, यह बात जेलमें अच्छी तरह समझ पाया। न जाने कितने प्रकारके मनोरंजन द्वारा वे सबको आमोदित करते। प्रेसीडेंसी जेलमें हमारेपर पहरे संगीन धारी गोरखा नियुक्त

था। एक दिन सवेरे उठकर उन्होंने देखा कि गोरखाके स्थानपर डण्डाधरी उत्तर भारतीय पहरेदार मौजूद है। उसे देखते ही वे बोले, "क्यों सुभाष! संगीनकी जगह यह बांस कहांसे आया? हम क्या इतने निरीह हैं?" हंसी दिल्लगीकेलिये उन्हें कुछ सोचना नहीं पड़ता था, वे स्वभावसेही रसिक थे।

रसबोध होनेपर आदमी प्रतिकूल घटनाओंसे कातर नहीं होता बल्कि हर अवस्थामें उसका मजा लूट सकता है। जेलके सुनसान स्थानमें रहनेपर ही इसकी सत्यता अच्छी तरह अनुभव होती है।

अंग्रेजी और बंगलाके वे प्रकाण्ड पण्डित थे। अंग्रेज कवियोंमें वे ब्राउनिंगके भक्त थे। ब्राउनिंगकी अनेक कविताएं उन्हें कण्ठस्थ थीं। जेलमें वे बार-बार ब्राउनिंगकी कुछ कविताओंका पाठ किया करते थे। वे रोजमर्राके काममें दैनिक साहित्यके अध्ययन द्वारा अनेक मनोरंजक बातोंका जिक्र करते, मगर जब तक वे उनकी व्याख्या नहीं करते, हम उसका पूरा मजा नहीं उठा सकते।

देशबन्धुने अपने एक आत्मीयकेलिये ६ रुपये सैकड़ेपर दस हजार रुपये उधार लिये थे, किन्तु वह समयपर

रुपया नहीं चुका सका, इसलिये कर्ज देनेवालेका एटर्नी आवश्यक लिखा पढ़ी करने उनके पास गया था। उनके पुत्र चिररंजनसे मालूम हुआ कि यह बात अभी तक उनके परिवारमें किसीको भी मालूम न थी। तथा जिसके लिये उन्होंने रुपया उधार लिया था, वह उस समय लखपति था किन्तु देशबन्धुने उससे कुछ न कह-कर स्वयं कागजातपर दस्तखत कर दिये। स्त्री पुत्र आदिको न बतलाकर बहुत-सा फण्ड लेकर उन्होंने औरोंकी सहायता की थी।

जो देशबन्धुकी निन्दा किये विना खाना नही खाते, मैंने उन्हे विपत्तिके समय देशबन्धुका शरणागत देखा है। इस तरहके एक महाशय एक बार दो सौ रुपयेकेलिये देशबन्धुके पास आये थे और देशबन्धुने उन्हें चुपचाप रुपया दे दिया था।

आठ महिनों तक साथ रहनेके कारण उनके हृदयकी सब बातें और अनुभूति जाननेका मुझे सुयोग मिला था किन्तु मैंने कभीभी बातचीत, या व्यवहारमें निम्नताका चिह्न नहीं देखा। राजनिति क्षेत्रमे उनके अनेक शत्रु थे, यह बात वे जानते भी थे, किन्तु किसीके भी प्रति उनके मनमे विद्वेष नहीं था। यहां तक कि जरूरत होनेपर वे उनकी सहायता करनेमें भी कुण्ठित नहीं होते थे।

जेलमें देशबन्धु अधिकतर अध्ययनमें लगे रहते। भारतकी राष्ट्रीयताके सम्बन्धमें पुस्तक लिखनेकेलिये उन्होंने राजनीति और अर्थ नीतिकी अनेक पुस्तकें मंगायी थी। सब चीजोंके एकत्र हो जानेपर उन्होंने पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, किन्तु समयकी कमी-के कारण वे जेलमें पुस्तक सम्पूर्ण नहीं कर सके। जेलसे बाहर आनेपर कर्मक्षेत्रमें रहनेके कारण वे अपने इस कार्य की पूर्ति नहीं कर सके। जेलमें राजनीति और साहित्यके सम्बन्धमें मैंने उनके साथ काफी आलोचना की थी। उनका विश्वास था कि हमारी राष्ट्रीयता और शिक्षा, दीक्षाके साथ हमारे समाज तत्व, राजनीति और दर्शनका भी उद्भव होगा। इसीलिये वे विभिन्न वर्ग और श्रेणीमें विवाद नहीं चाहते थे और इस विषयमें कार्ल मार्क्सके विरोधी थे। अन्तिम समयतक उनका विश्वास था कि भारतके सभी सम्प्रदायों और श्रेणियोंमें पैकृ हो जायगा और सब लोग एकमत होकर स्वराज्य आन्दोलनमें योग देंगे। अनेक लोग उनका मजाक उड़ाकर कहते कि पैकृसे वास्तविक संगठन या मिलन नहीं हो सकता क्योंकि मेल सहानुभूति पर निर्भर करता है, दरमुलाईसे मेल नहीं होता। वे कहते कि समझौता किये बिना मनुष्य दुनिया-

में एक दिन भी नहीं रह सकता। तथा मनुष्य या समाज एक दिन भी नहीं टिक सकता। क्या परिवारमें, क्या सामाजिक या राजनैतिक जीवनमे, विभिन्न रुचि और विचारके आदमियोंमे समझौता हुए विना आदमियोंका एक साथ रहना विलकुल असंभव है ; पृथ्वीके एक प्रांत-से दूसरे प्रान्तका व्यवसाय वाणिज्य सिर्फ आपसी समझौतेके वलपर ही चलता है। उनके बीचमे प्रेमकी गन्ध भी नहीं रहती, यह कहना अत्युक्ति न होगा।

भारतके हिन्दू नेताओंमे इस्लामका इतना बड़ा हिता-कांक्षी और कोई था, यह मैं नहीं जानता। और वही देशवन्धु तारकेश्वर सत्याग्रहके सर्वस्व थे। वे हिन्दू धर्म-को इतना चाहते थे कि उसके लिये प्राणदेनेको तैयार थे। किन्तु उनके मनमें अहमन्यता नहीं थी, इसीलिये वे इस-लामको भी चाहते थे। मैं जानना चाहता हूं कितने हिन्दू नेता हृदयपर हाथ रखकर कह सकते हैं कि वे मुसलमानसे घृणा नही करते? कितने मुस्लिम नेता हृदयपर हाथ रखकर कह सकते हैं कि हिन्दूसे घृणा नहीं करते। देशबन्धु धर्ममतकी दृष्टिसे वैष्णव थे, किन्तु उनके हृदयमे सब धर्मावलम्बियोंकेलिये स्थान था। पैक्ट द्वारा विवाद मिट जानेपर भी वे यह विश्वास नही

करते थे कि सिर्फ इसीसे हिन्दू-मुसलमानोंमें प्रेम उत्पन्न हो जायगा। इसीलिये वे शिक्षा (Culture) द्वारा हिन्दू मुसलमानोंमें मैत्री स्थपित करना चाहते थे। हिंदू संस्कृति और मुस्लिम संस्कृतिमें कहांपर मेल है, इस विषयपर वे जेलमें अक्सर मौलाना अकरमखांके साथ आलोचना किया करते थे। मुझे जहांतक मालूम है हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक मिलनके सम्बन्धमें प्रबन्ध लिखनेके लिये मौलाना साहब राजी हो गये थे।

भारतमें स्वराज्य होगा वह सिर्फ उच्च श्रेणीके लोगोंकी स्वार्थसिद्धिके लिये नहीं बल्कि जनसाधारणके उपकार और मंगलके लिये, इस बातका देशबन्धुने जितने जोरोंसे प्रचार किया था, प्रथम श्रेणीके अन्य किसी नेता ने ऐसा किया था; यह मैं नहीं जानता। स्वराज्य जन-साधारणके लिये है,यह बात कुछ नयी नहीं है। निश्चय,ही तीस वर्ष पहले स्वामी विवेकानन्दने अपनी "वर्तमान-भारत" नामक पुस्तकमें इसका उल्लेख किया था, किंतु स्वामीजीकी भविष्यवाणीकी प्रतिध्वनि उस समय राज-नीतिके रंगमंचपर सुनायी नहीं पड़ी थी।

जेलसे छूटनेके बाद देशबन्धुने जिन बातोंका प्रचार किया था, उन्हें उन्होंने जलमें अच्छी तरह सोच लिया था

समय समय पर उन सब बातोंको लेकर हमलोगोंके साथ आलोचना हुआ करती थी। कौंसिल प्रवेशकी बात उन्होंने जेलमें ही निश्चिन्त की थी। तथा बहुत कुछ तर्क वितर्कके बाद हमलोगोने उसका समर्थन किया था। कौंसिल प्रवेशके प्रस्तावको लेकर उस समय जेलमें काफी दलादलि हुई थी। दैनिक अंग्रेजी निकालनेका सङ्कल्प भी हम सबने जेलमे ही किया था। किन्तु दुख है कि उनके अनेक महान् संकल्प कार्य रूपमें परिणत नहीं हुए।

जेलकी एक घटनाका उल्लेख किये बिना मैं नहीं रह सकता। कैदियोंके प्रति उनका प्रेम! हम जिस समय प्रेसीडेन्सी जेलसे अलीपुर जेलमें आये—उस समय हमारे वार्डमें माथुर नामका एक कैदी काम करता था। जेलकी भाषामें जिसे "पुराना चोर" कहते हैं, माथुर वही था। उसे चोर कहना अन्याय है, वह डाकू था, आठ दस बार वह जेलखानेमें आ चुका था। तथा डाकूकी तरह ही उसका अन्तःकरण खूब सरल था। कुछ दिन काम करनेके बाद वह देशबन्धुको स्नेह और भक्ति करने लगा। वह उन्हें बाबा कहने लगा। माथुरके प्रति देशबन्धुके हृदयमें समवेदना और स्नेह उत्पन्न हुआ। क्रमश वह हम सबके

प्रति खिचने लगा। रात या दिनमें जब वह उनके पैर दबाता तब अपने जीवनकी सब बातें कहता। छूटनेके समय उन्होंने माथुरसे कहा था कि छूटनेपर मैं तुम्हें अपने घरपर रखूंगा। माथुर भी इस प्रस्तावसे अपार आनन्दित हुआ और उसने संकल्प किया कि वह खराब काम और खराब संगति छोड़ देगा।

माथुरके छुटकारेके दिन देशबन्धुने आदमी भेजकर उसे अपने घर बुलवा लिया। इसके बाद लगभग तीन सालतक वह उनके पास रहा। उनके परिचारककी हैसियतसे वह भारतके विभिन्न प्रांतोंमे घूमा था। दागी चोर होनेके कारण पुलिस कुछ समयतक उसके पीछे लगी रही, किन्तु जब देखा कि सचमुच वह देशबन्धुके आश्रय-रहने लगा तब पुलिसने उसका पीछा छोड़ दिया। जमादार प्राय उसे देखकर कहता, "बच्चा! अब तुम आदमी हो गये।" मेरा विश्वास था कि माथुरका फिर पतन न होगा. किन्तु देशबन्धुके देह त्यागके बाद जब पत्र द्वारा माथुरकी खबर जाननी चाही तो सुना कि जब देशबन्धु दार्जिलिङ्ग थे, तभी उनके रसारोडवाले मकानसे चांदीकी कुछ चीजें लेकर वह लापता हो गया। यह अद्भुत समाचार पढ़कर मुझे Les Miserables की कहानी याद

आ गयी। मेरा अभी विश्वास है कि माथुर उनके पास रहता तो उनके व्यक्तित्वके प्रभावसे लोभके वशीभूत नहीं होता। क्षणिक दुर्बलताके वशीभूत होकर उसने चोरी की थी, किन्तु मेरा विश्वास है कि वे जीवित रह-ते तो किस न किसी दिन वह उनके पैरोंपर गिर कर रोता हुआ माफी मंगाता। अब उसकी क्या हालत होगी सो भगवान जाने। मनुष्य कैसे एक साथ प्रकाण्ड बैरिष्टर, उदार स्नेही, परम वैष्णव, चतुर राजनीतिज्ञ, दिग्विजयी वीर हो सकता है। यह प्रश्न स्वभावतः सबके मनमें उठ सकता है। मैंने नृ-तत्व विद्याकी सहायतासे इस प्रश्नका समाधान किया है, पर कृत कार्य हुआ हूं कि नहीं, नहीं जानता। आर्य, द्रविड़ और मंगोल, इन तीन जातियोंके सम्मिश्रणसे वर्तमान बंगाली जातिकी उत्पत्ति हुई है। प्रत्येक जातिमें कुछ गुण विशेष रूपसे विक-सित होते हैं। इसलिये रक्तका सम्मिश्रण होनेसे गुणों-का विशेष विकाश होता है, रक्त सम्मिश्रणके फलसे बंगालीकी प्रतिभा सर्वतोमुखी है। आर्योंकी धर्म-प्रियता और आदर्शवाद, द्राविणोंकी कला विद्या और भक्तिमत्ता तथा मंगोलोंका बुद्धि-कौशल और वास्तववाद बंगाल सागरमे मिल गया है। बंगाली एक साथ ही तीक्ष्ण

बुद्धि और भावुक, मायावाद विद्वेषी और आदर्शवादी, अनुकरणक्षम और सृष्टिक्षम है, इसका कारण रक्त सम्मिश्रण है। जिस जातिका रक्त व्यक्तिकी धमनियोंमें प्रवाहित होता है, उसके संस्कार व्यक्तिके चित्तमें अवस्थित रहते हैं। बंगाली जिस प्रकार एक जातिके रूपमें परिणित हुआ है, उसी तरह बंगालीके culture ने भी एक तरहका वैशिष्ठ्य लाभ किया है।

बंगालके साहित्य और इतिहासके साथ जिनका परिचय है, वे स्वीकार करेंगे कि बंगालकी सभ्यता आर्य सभ्यता होनेपर भी उसका अपना एक वैशिष्ठ्य है। स्वामी दयानन्दने आर्य-समाज चलाकर उत्तर भारत जय किया, पर वे बंगाल जय नहीं कर सके। और काली भक्त परमहंस देवको बंगाली इतनी श्रद्धा भक्ति क्यों करते हैं? बंगालमें दाय भागका प्रचलन क्यों है? बौद्ध धर्म सब जगहसे विताड़ित होकर अन्तमें बंगालका शरणागत क्यों हुआ? बंगालमें नव्य न्यायकी उत्पत्ति क्यों हुई? बंगालने शंकरका मायावाद ग्रहण क्यों नहीं किया? बौद्धधर्मके बंगालसे विताड़ित होनेपर शंकरके मायावादके प्रतिवाद स्वरूप अचिन्त्य भेदाभेदकी सृष्टि क्यों हुई? इन सब प्रश्नोंपर विचार करनेसे ही समझा जा सकता

है कि बंगालकी संस्कृतिमें तीन धाराएं दिखलाई पड़ती हैं, (१) तन्त्र (२) वैष्णव धर्म, (३) नव्य न्याय और और रघुनन्दनकी स्मृति। न्याय और स्मृतिमें बंगाल आर्यावर्तके साथ है, वैष्णव धर्ममें बंगाली द्राविणोंके साथ है, तन्त्रोंमें वह तिब्बतीय और पार्वतीय जातियोंके साथ है।

न्याय शास्त्रके अनुशीलनने बंगालीको तार्किक तथा नैयायिक बना दिया। इसी प्रकृतिने विकसित होकर देश-बन्धुको बहुत बडा बैरिष्टर बना दिया। देशबन्धुने प्राचीन न्याय शास्त्र पढ़ा था या नही मालूम नहीं, किन्तु पाश्चात्य तर्क शास्त्रका अध्ययन उन्होंने किया था। बड़े भारी नैयायिककी तरह वे बालकी खाल निकालनेवाला तर्क कर सकते थे। तथा अविराम वाक्य प्रवाहके द्वारा वे शत्रु पक्षका विध्वस्त कर सकते थे। दो तीन सौ वर्ष पहले नदियामें जन्म ग्रहण करते तो निश्चय ही वे बड़े भारी नैयायिक होते।

बङ्गालका वैष्णव धर्म और द्वैताद्वैतवाद देशबन्धुको नास्तिकतासे खींचकर नीरस वेदान्तके भीतरसे प्रेम मार्ग पर ले गया था, दार्शनिक मतके रूपमें वे अचिन्त्य भेदा-भेदवादको सबसे शुद्ध मानते थे। वे बहुत कुछ संन्यासी-

से थे, पर संन्यास उनका धर्म नहीं था। भगवान जिस तरह सत्य है, उसी तरह उनकी लीला भी सत्य है, ब्रह्म सत्य है तो जगत मिथ्या कैसे है? अतएव भगवानको पानेकेलिये रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द, किसीका भी वर्जन करना प्रयोजनीय नहीं है। भगवानकी लीला अनन्त है और उसमें भी बाहिरी दुनिया ही नहीं; भीतरी अन्तर्जगत भी है। वस्तुतः देशबन्धुने सम्पूर्ण जगतको तथा मनुष्य जीवनको पूर्ण रूपसे ग्रहण कर लिया था। द्वैताद्वैत वादकी सहायतासे उन्होंने जीवनके सब विरोधोंको दूर कर दिया था और धर्म सामंजस्य स्थापित कर लिया था। इसीलिये वैष्णव धर्म उनके जीवनका आश्रय था। वे बातचीत और व्याख्यान आदिमें प्रायः कहा करते थे कि अर्थनीति, राजनीति, दर्शन, साहित्य, धर्म, इन सबको अलग-अलग देखनेसे काम नहीं चलेगा, क्योंकि इनका आपसमे अंगांगी सम्बन्ध है। तथा एकको भी बाद देनेसे जीवन पूर्ण नहीं हो सकता।

जिस दार्शनिक तत्वने उनके धर्म सम्बन्धी विरोधोंका नाश किया था। उसीने उनके हृदयमे सबके प्रति स्नेह उत्पन्न किया था। उन्होंने अपने जीवनका सामंजस्य कर लिया था।

जेलमें वे अपनी निर्विचार वदान्यताकी आलोचना सुनकर कहते, "देखो ! तुम समझते हो कि मैं कुछ समझता नहीं हूं, लोग मुझे ठगकर रुपये ले जाते हैं, किन्तु मैं सब समझ सकता हूं, मेरा काम दिये जाना है, इसलिये मैं दिये जाता हूं। विचार करनेका भार जिनके ऊपर है, वे विचार करेंगे।"

जिस तन्त्रके उपदेशसे बंगालीने शक्ति पूजा सीखी, उसी तन्त्रके फलस्वरूप देशबन्धु असाधारण तेजस्वी थे। निश्चय ही देशबंधुने किसी भी दिन तांत्रिक साधना नहीं की थी। किन्तु कुलाचार आदिके विना शक्तिमान नहीं हुआ जा सकता, इसपर मैं विश्वास नहीं कर सकता। तन्त्रका सार शक्ति पूजा है। जगतका मूल आद्या शक्ति है। जिससे सृष्टि, स्थिति, प्रलय, अथवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर हैं। उसी आद्या शक्तिके साधक मातृ-रूपमें इसकी आराधना करते हैं। बंगालीपर तन्त्रका प्रभाव खूब अधिक है, इसलिये वह माका अत्यन्त अनुरक्त है। तथा भगवानको मातृ-रूपमें मानता है। पृथ्वीकी अन्यान्य जातियां (यहूदी, अरब, ईसाई आदि) भगवानको पिता रूपमें देखते हैं। भगिनी निवेदिताके कथनानुसार उस समाजमें नारीकी अपेक्षा पुरुषका प्राधान्य है इसी लिये वहां वाले

भगवानको पिता रूपमें देखते हैं। दूसरी तरफ जिस समाजमें पुरुषकी अपेक्षा नारीका प्राधान्य है, वहांके आदमी भगवानको .मातृ-रूपमें देखते हैं। जो भी हो, बंगाली भगवानको,—सिर्फ भगवानको ही क्यो, बंगाल और भारतवर्षको मातृ-रूपमे ही प्रेम करते हैं, यह सब जानते हैं। देशको हम मातृभूमि कहते हैं।

बंकिमचन्द्रने लिखा है,—

"सुजलां सुफलां मलयज शीतलाम्
शस्य श्यामलाम् मातरम्।"

द्विजेन्द्रलालने कहा है,—

"जे दिन सुनील जलधि हइते उठिल जननी
भारतवर्ष।"

रवीन्द्रनाथने भी गाया है।

"ओ आमार जन्मभूमि तोमार पाये ठेकाई माथा।"

देशबन्धु भी मातृ-रूपके अनुरागी थे। जेलमें वे बंकिम बाबूकी किताबें पढ़कर सुनाया करते थे। बंकिम लिखित माका तीन प्रकारका वर्णन उन्हे बहुत पसन्द था। उनके "नारायण" पत्रमें वैष्णव और शाक्त धर्मकी समान रूपसे आलोचना हुआ करती थी। दुर्गा पूजाके सम्बन्धमें

"नारायण" में जो कुछ लेख प्रकाशित हुए थे, वे उच्च भावपूर्ण थे।

देशबन्धुके व्यावहारिक जीवनमें भी हम तंत्रका प्रभाव देख पाते हैं। वे स्त्री शिक्षा और स्त्री स्वाधीनता-में विश्वास करते थे, यह सब जानते थे। शंकर पंथियोंके इस कथनमें कि "नारी नरकस्य द्वारम्" उनका बिलकुल विश्वास नहीं था।

उनके गुण बंगालीके गुण थे, उनके दोष बंगालीके दोष थे। उनकेलिये सबसे महान् गौरवकी बात यही थी कि वे बंगाली थे। जब कोई बंगालीको भाव प्रवण कहकर उसका मजाक उड़ाता तो वे बहुत व्यथित होते। वे कहते हम भाव प्रवण हैं, यही हमारा गौरव है।

मनुष्य जातिकी संस्कृति एक है या अनेक यह प्रश्न अनेक मनुष्य उठाते हैं। कोई कहते हैं संस्कृतिमें भेद नहीं है, संस्कृति एक ही है, वे अद्वैतवादी हैं। जो कहते हैं संस्कृतिमे भी जातीयता है, वह अनेक हैं, वे द्वैतवादी हैं। किन्तु देशबन्धु द्वैताद्वैतवादी थे। संस्कृति एक भी है, अनेक भी है। मूलतः मनुष्य जातिकी संस्कृति एक है, पर उसका विकाश अनेक द्वारा हुआ है। बगीचेमे जैसे नाना प्रकारके वृक्ष रहते हैं और उनके तरह तरहके फूल

होते हैं, मानव समाजमें भी उसी प्रकार भिन्न भिन्न तरहकी संस्कृति विकसित होती है। प्रत्येक जातिकी संस्कृतिका विकाश होगा तो संसारकी मानव जातिकी संस्कृतिका विकाश होगा। राष्ट्रकी संस्कृतिका विकाश रोककर विश्वकी संस्कृतिका पूर्ण विकाश नहीं किया जा सकता। देशबन्धुका स्वदेश प्रेम विश्व प्रेमका अंग था, किन्तु उन्होंने स्वदेश प्रेमको छोड़कर विश्वप्रेमी बननेका प्रयास नहीं किया।

देशबन्धु अपने स्वदेश प्रेममें बंगालको भूल नहीं जाते थे। अथवा बंगालके प्रेममें स्वदेशको नहीं भूल जाते थे किन्तु उनका प्रेम बंगालकी सीमामें बद्ध नहीं था। महाराष्ट्रमें भी वे तिलक महाराजकी तरह प्रेम और सहानुभूति पाते थे।

देशबन्धुने कहा, बंगालको स्वराज्य संग्राममें अग्रणी होना होगा। १६२० में बंगालने स्वराज्य आन्दोलनका नेतृत्व खो दिया। किन्तु सन् १६२३ मे उसका नेतृत्व उसे फिर मिल गया।

और एक बात देशबन्धु कहा करते थे कि भारतवर्षका कोई आन्दोलन बंगालमें चलाना हो तो उसपर बंगाल की छाप लगा लेना चाहिये। वे कहते, बंगालमें सत्याग्रह

आन्दोलन चलानेके पहले उसे बंगालके उपयुक्त बना लेना होगा।

जनसाधारणपर ही नहीं पर बड़ों बड़ोंपर उनका आश्चर्यजनक प्रभाव देखकर सब विस्मय विमुग्ध रहते थे। किसी किसीने उनके प्रभावका कारण समझनेकी चेष्टा भी की। उन्होंने जब जिस बातका संकल्प किया, उसे पूरा किया। "मंत्रं वा साधयेयम् शरीरं वा पातयेयम्" यही वाणी उनके हृदयपर अंकित थी। वे दुर्बाध विक्रम-से जिस तरफ जाते, उन्हें कोई रोक नही सकता था। उस समय वे किसीकी पर्वा नही करते, प्रियजनोंका आर्त्तनाद और अनुचरोंका करुण स्वर भी उन्हें पथसे वापिस नहीं ला सकता था। यह दिव्यशक्ति देशबन्धु ने कहांसे पायी ? यह शक्ति क्या साधना द्वारा मिली थी ?

मैंने पहले ही कहा है कि शक्तिके साधक होनेपर भी उन्होंने तंत्रानुसार शक्ति साधना नहीं की थी। उनके प्राण महान् थे। आकांक्षा भी महान् थी। वे जिस समय जो चाहते थे उसे प्राणपणसे चाहते और उसे पानेकेलिये प्राणप्रणसे लग जाते। नेपोलियन बोनापार्टने अल्पस पहाड़ देखकर जैसे एक समय कहा था, "There shall be no Alps" मेरे सामने अल्पस पहाड़ खड़ा नहीं

रह सकता ? उसी तरह वे भी बाधा-विघ्नको तुच्छ समझते थे। किस आधारपर "फारवर्ड" का प्रकाशन और "कौंसिल-जय" का काम शुरू किया था ! हमलोग असुविधा या बाधाकी बात कहते तो वे धमकाकर कहते, "तुमलोग बिलकुल pessimist हो। वे अक्सर कहते, "you yong-old man ! तुम असमयवृद्ध युवक ! वे चिरयुवा, चिरनवीन थे। वे तरुणोंको आशा, आकांक्षाको समझते थे। इसीलिये मैंने उन्हें "तरुणोंका राजा" कहा है।

उनके त्याग, पाण्डित्य, बुद्धि कौशल (tact) की बातें देशवासी जानते हैं। उनके अलौकिक प्रभावका एक कारण और कहकर मैं बस करूंगा। मैंने कहा है कि वैष्णवधर्मकी सहायतासे उन्होंने वास्तव जीवन और आदर्शके बीचमें एक सामंजस्य स्थापित किया था। वे अनुभूति द्वारा अपनेको भगवानकी लीलाका यंत्र समझते थे। उनके अहंकारका लोप हो गया था और अहंकारका लोप होनेपर मनुष्यमें दिव्य शक्ति आ जाती है। जीवनके अन्तिम दिनोंमें यह अवस्था थी कि—"यत्र दास महाशय तत्र जय।"

उन्होंने कितने तरहके आदमियोंसे कितने तरहके

काम करवानेकी चेष्टाएं की यह शायद देशवासी नहीं जानते। उनके बोए हुए वृक्षमें जब फल आयेगा। तब देशवासी जानेंगे। जीवन, मरण, शयन, स्वप्नमें उनका एक ही ध्यान था, एक ही चिन्ता थी, स्वदेश सेवा।

स्वदेश सेवा ही उनके धर्म जीवनका सोपान था।

देशबन्धुके जीवनकी बात कहते हुए यदि एक व्यक्ति का उल्लेख न किया जायगा तो, कुछ न कहा जायगा। जो देवी जनसाधारणकी दृष्टिसे तिरोहित मूर्तिमती-सेवा और शान्तिकी तरह, छायाके समान देशबन्धुके पार्श्वमें रहतीं, उनको बाद देनेसे देशबन्धुके जीवनमे क्या बाकी रह जायगा यह कौन कह सकता है? भोगके अत्युच्च शिखरपर जिन्होंने हिन्दू रमणीके आदर्श, लज्जा, नम्रता और सेवाको किसी दिन विस्मृत नहीं किया, विपत्के महान् अन्धकारमे जिन्होंने पातिव्रत, चित्तस्थैर्य और भगवद्विश्वासका सहारा न छोड़ा, उन्ही देवीकी बात लिखते समय मुझे शब्द नहीं मिलते। देशबन्धु तरुणों के राजा थे और उनकी पतिव्रता साध्वी पत्नी तरुणोंकी माता। देशबन्धुके देहत्यागके बाद आज वे सिर्फ चिर-रंजनकी ही माता नहीं हैं, सिर्फ तरुणोंकी ही माता नहीं

है, वे आज समस्त बंगालकी मा हैं। बंगालीके हृदयका सर्वश्रेष्ट अर्घ्य आज उनके चरणोंपर समर्पित है।

अलीपुरके मामलेमें अरविन्द बाबूका समर्थन करते हुए देशबन्धुने कहा था—

He will be looked upon as the poet of patriotism, the prophet of nationalism and the lover of humanity. His words well be echoed and reechoed, etc.

यह क्या आज देशबन्धुके सम्बन्धमें नहीं कहा जा सकता?